Con. 4. VIII.11.49
320

अंक 8
संख्या 11

सोमवार
30 मई
सन् 1949 ई.

सत्यमेव जयते

भारतीय संविधान-सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

भारतीय अधिनियम, 1946 (संशोधन) विधेयक........ 613-615

संविधान का प्रारूप........ 616-669

[अनुच्छेद 124 से 131 पर विचार]

भारतीय संविधान-सभा

सोमवार, 30 मई, 1949

भारतीय संविधान-सभा कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः आठ बजे अध्यक्ष महोदय माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में समवेत हुई।

भारतीय अधिनियम 1946 (संशोधन) विधेयक

***माननीय डा. श्यामाप्रसाद मुखर्जीः** (पश्चिमी बंगाल : जनरल) श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं किः

> ''भारतीय (केन्द्रीय सरकार और विधान-मंडल के) अधिनियम 1946 के संशोधक विधेयक पर यह सभा तुरन्त विचार करे।''

श्रीमान्, यह विधेयक भारतीय (केन्द्रीय सरकार और विधान मंडल के) अधिनियम 1946 में, जिसका 26 मार्च 1946 को ब्रिटिश पार्लियामेंट में पारण हुआ था, संशोधन करने के लिये उपस्थित किया गया है। इस संशोधन के दो उद्देश्य हैं। इसका पहला उद्देश्य यह है कि रुई (जिसमें धुनी हुई रुई तथा कपास और बिनौले सम्मिलित हैं) ऐसे पदार्थों की श्रेणी में रखी जाये जिन पर केन्द्र का नियंत्रण है। इसका दूसरा उद्देश्य कोयले की ऐसी परिभाषा करता है कि फिर इसके सम्बन्ध में सन्देह के लिये कोई स्थान न रह जाये और यह निर्धारित करना है कि कोयले में पत्थर का कोयला और कोयले के बने हुए पदार्थ भी सम्मिलित हैं।

पहले मैं दूसरे उद्देश्य के सम्बन्ध में बोलूंगा। कुछ वर्षों से कोयले, पत्थर के कोयले और कोयले के बने हुए पदार्थों पर केन्द्र का नियंत्रण रहा है। हाल में न्यायालयों में एक दो निर्णय इस आशय के किये गये हैं कि पत्थर का कोयला विधि की दृष्टि से कोयले की परिभाषा के अन्तर्गत नहीं आता। यह प्रश्न विधि-विभाग के सम्मुख रखा गया और उसने यह परामर्श दिया है कि उचित यह होगा कि अधिनियम को ही संशोधित किया जाये और उसके निर्वचन को पहले की तिथि से प्रवर्तन में लाया जाये और इस आशय का उपबंध रखा जाये कि कोयले में पत्थर का कोयला तथा कोयले के बने हुए सभी पदार्थ सम्मिलित हैं, ताकि किसी प्रकार के सन्देह के लिये स्थान न रह जाये।

जहां तक रुई का सम्बन्ध है, जब भारत-रक्षा-नियम प्रवर्तन में थे, उस समय रुई पर केन्द्र का नियंत्रण था। सभा को स्मरण होगा कि बाद में भारत-रक्षा-नियमों के अधीन जो शक्तियां केन्द्रीय सरकार और केन्द्रीय विधान मंडल को प्राप्त थी, उनका शून्यन हो गया। मार्च 1946 में भारत सरकार के अधिनियम को विशेष रूप से संशोधित किया गया। जब मैं आपकी अनुमति से, इसे अधिक संशोधित करने का प्रस्ताव रख रहा हूं, ताकि भारत सरकार को कुछ समय के लिये, यदि आवश्यक हो तो, कुछ पदार्थों के सम्बन्ध में विधि बनाने की कुछ शक्तियां प्राप्त हो जायें।

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[माननीय डा. श्यामाप्रसाद मुकर्जी]

साधारणतया ये पदार्थ प्रान्तीय अधिकार-क्षेत्र के अन्तर्गत आते हैं। ये समवर्ती सूची में रखे गये थे। दूसरे शब्दों में यदि केन्द्रीय विधान मंडल का यह विचार हो कि इन पदार्थों पर केन्द्र का नियंत्रण हो तो यह व्यवस्था पांच वर्ष तक की जा सकती है। सभा को स्मरण होगा कि इस प्रकार के नियंत्रित पदार्थों की सूची में आठ पदार्थ हैं: खाद्य पदार्थ, सूती और ऊनी कपड़ा, कागज, पेट्रोल और पेट्रोल से बने हुए पदार्थ, यंत्रों से चलने वाली गाड़ियों के भाग, कोयला, लोहा और इस्पात तथा अबरक। एक समय यह विचार किया गया था कि सूती तथा ऊनी कपड़े में कपास भी सम्मिलित है। किन्तु बाद में यह बताया गया कि सूती और ऊनी कपड़े का अर्थ केवल सूती और ऊनी कपड़ा ही है। यदि इसका अर्थ केवल सूती और ऊनी कपड़ा ही है, तो सूती कपड़ा इस परिभाषा के अन्तर्गत न आयेगा। यह एक अनर्गल बात होगी। इसलिये वर्तमान विधि के अनुसार रुई केवल प्रान्तीय अधिकार-क्षेत्र के अन्तर्गत आती है। पिछले वर्ष, जब रुई फिर से नियंत्रित की गई थी, तो प्रान्तों का तथा सम्बन्धित सभी पक्षों का यही मत था कि रुई को भी नियंत्रित करना आवश्यक है। किसी विधि द्वारा हमें यह शक्ति प्राप्त नहीं थी। इसलिये हम ने एक रुई-नियंत्रक आज्ञा का मसौदा बनाया और प्रान्तों से कहा कि वे उसके अनुसार विधि बनायें। कुछ प्रान्तों ने ऐसा किया और कुछ प्रान्तों ने देर कर दी। इसके बाद राज्यों को इसी प्रकार की विधि बनाने के लिये राजी करने में बहुत समय लग गया। बाद को इस नियंत्रक आज्ञा को प्रयोग में लाने के सम्बन्ध में आदेश देने में बहुत सी पेचीदगियां पैदा हो गई, क्योंकि केन्द्रीय सरकार को कोई विधि बनाने अथवा कार्यपालन सम्बन्धी कोई कार्यवाही करने के लिये कोई विधि-प्रदत्त शक्ति प्राप्त नहीं थी। यह प्रश्न प्रान्तीय सरकारों के सम्मुख रखा गया और अब वे इसके लिये राजी हो गई हैं कि रुई को भी केन्द्र द्वारा नियंत्रित पदार्थों के अंतर्गत रखा जाये। इसमें कोई सन्देह नहीं कि रुई पर नियंत्रण कई दशाओं को ध्यान में रखकर रखा जायेगा और ये दशायें समय-समय पर बदल सकती हैं।

मैंने संसद के इस अधिनियम को संशोधित करने के लिये आज एक प्रस्ताव इस कारण उपस्थित किया है कि यह सभा ही, न कि केन्द्रीय विधान मंडल, इसमें संशोधन कर सकती है। इसके फलस्वरूप यदि केन्द्रीय विधान मंडल चाहेगा तो रुई भी एक नियंत्रित पदार्थ हो जायेगी। विधेयक के विधि का रूप धारण कर लेने पर केन्द्रीय विधान मंडल को एक अन्य विधेयक को इस उद्देश्य से स्वीकार करना होगा कि रुई भी उस आवश्यक-प्रदाय-अधिनियम के पदार्थों में सम्मिलित हो जाये, जो इस समय उपरोक्त आठ पदार्थों के सम्बन्ध में प्रयोग में है। यह एक साधारण तथा विवाद शून्य प्रस्ताव है और इसके सम्बन्ध में सभा के किसी सदस्य महोदय ने कोई संशोधन भी उपस्थित नहीं किया है। मुझे आशा है कि यह प्रस्ताव बिना वाद-विवाद हुए ही स्वीकार कर लिया जायेगा।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"भारतीय (केन्द्रीय सरकार और विधान मंडल के) अधिनियम, 1946, के संशोधन विधेयक पर यह सभा तुरन्त विचार करे।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** इसके सम्बन्ध में कोई संशोधन उपस्थित नहीं किया गया है। इसलिये मैं इसके खंडों पर सभा का मत लेता हूं।

प्रस्ताव यह है कि:

''खंड 1 से 4 तक विधेयक के अंग बना लिये जायें।''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

खंड 1 से 4 तक विधेयक के अंग बना लिये गए।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

''प्रस्तावना तथा नाम विधेयक के अंग बना लिये जायें।''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

प्रस्तावना तथा नाम विधेयक के अंग बना लिये गये।

***माननीय डा. श्यामाप्रसाद मुखर्जीः** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि इस सभा ने जिस विधेयक के सम्बन्ध में निर्णय किया है उसे स्वीकार कर लिया जाये।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

संविधान का प्रारूप—(*जारी*)

अनुच्छेद 124

***अध्यक्षः** अब सभा संविधान के मसौदे, अर्थात् अनुच्छेद 124 पर विचार करेगी।

इस अध्याय के शीर्षक के सम्बन्ध में मि. नजीरुद्दीन अहमद ने एक संशोधन (संख्या 1974) की सूचना दी है।

चूंकि वह शीर्षक के सम्बन्ध में है, इसलिये उसे हम इस समय छोड़ सकते हैं।

एक नया भाग जोड़ने के सम्बन्ध में एक संशोधन, अर्थात् संशोधन संख्या 1973, श्री गोपाल नारायण का भी है।

(संशोधन उपस्थित नहीं किया गया।)

अब तीसरे सप्ताह की सूची का संशोधन संख्या 25 उपस्थित किया जा सकता है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रास : जनरल): श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 1975 के सम्बन्ध में अध्याय 5 में जहां कहीं (जिसमें शीर्षक भी सम्मिलित है) 'Auditor-General शब्द आया है, उसके स्थान में 'Comptroller and Auditor-General' शब्द रखे जायें।''

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

यह संशोधन एक साधारण कारण को ध्यान में रखकर उपस्थित किया गया है। संविधान के मसौदे में महालेखापरीक्षक को केवल लेखा-परीक्षण का ही कार्य नहीं दिया गया है, बल्कि सरकार के व्यय पर नियंत्रण रखने का भी कार्य दिया गया है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि 1935 के अधिनियम में जहां कहीं 'महालेखा-परीक्षक' शब्द आया है, वहां उसके ये दोनों कृत्य समझे गये हैं। किन्तु, चूंकि यह सम्भव है कि हम संसद को महालेखा-परीक्षक का नाम ऐसा होना चाहिये कि संविधान के मसौदे में उसे जो शक्तियां प्रदान की गई हैं और उनके अनुसार उसे जिन कर्तव्यों का पालन करना है, वे सब उससे व्यक्त हो जायें। इसलिये यह प्रश्न बहुत सरल है। इसका सम्बन्ध केवल महालेखा-परीक्षक के नाम से ही है, जिससे उसके वे सभी कर्त्तव्य व्यक्त हो जायें जिनका वह इस समय पालन करता है अथवा भविष्य में पालन करेगा। मुझे आशा है कि यह सभा इस संशोधन को स्वीकार करने में किसी कठिनाई का अनुभव नहीं करेगी।

*__अध्यक्ष:__ इसके बाद संशोधन संख्या 130 आता है। यह भी श्री टी.टी. कृष्णमाचारी के नाम से है।

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:__ संशोधन संख्या 1975 के सम्बन्ध में एक अन्य संशोधन भी उपस्थित किया गया है।

*__अध्यक्ष:__ आपने संशोधन संख्या 130 की सूचना दी है।

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:__ वह केवल संशोधन संख्या 1975 के आशय को अधिक विस्तृत बनाता है। इस समय या तो संशोधन संख्या 1975 उपस्थित किया जाये या मैं अपने विस्तृत आशय वाले संशोधन को उपस्थित करूं?

*__अध्यक्ष:__ श्री बी. दास संशोधन संख्या 1975 को उपस्थित करें।

*__श्री बी. दास__ (उड़ीसा : जनरल): श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि

> ''अनुच्छेद 124 के खंड (1) में 'President' शब्द के बाद 'by warant under his hand and seal' शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

श्रीमान्, मैंने यह संशोधन इसलिये उपस्थित किया है कि महालेखा-परीक्षक भी उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायधिपति के समान राष्ट्रपति द्वारा ही नियुक्त होगा और इसलिये यह आवश्यक है कि 'उसके हस्ताक्षर तथा मुद्रा सहित अधिपत्र द्वारा' शब्द प्रविष्ट किये जायें।

*__अध्यक्ष:__ अब संशोधन संख्या 130 उपस्थित किया जा सकता है।

*__श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:__ अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 1975 के सम्बन्ध में, अनुच्छेद 124 के खंड (1) के बाद निम्नलिखित नवीन खंड प्रविष्ट किया जाये:
>
> '(1-a) Every person appointed to be the Comptroller and Auditor-General of India shall, before he enters upon his office, make and

subscribe before the President or some person appointed in that behalf by him an affirmation or oath according to the form set out for the purpose in the Third Schedule.'''

श्रीमान्, मेरे माननीय मित्र श्री बी. दास ने जो संशोधन उपस्थित किया है, उसका यह बहुत कुछ अनुवर्ती संशोधन है। राष्ट्रपति के हस्ताक्षर तथा मुद्रा सहित अधिपत्र द्वारा नियुक्ति होने के कारण अब इस पद की प्रतिष्ठा बढ़ रही है। चूंकि उन नियुक्तियों के सम्बन्ध में ही इस प्रणाली का अनुसरण किया जायेगा, जिनमें सम्बन्धित अधिकारी को शपथ लेनी होगी, इसलिये प्रस्तावित खंड को रखकर इसकी कमी पूरी कर देनी चाहिये।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1976 उपस्थित नहीं किया जायेगा, क्योंकि संघ की अन्य नियुक्तियों के सम्बन्ध में विचार करते समय सभा इस संशोधन में सन्निहित सिद्धांत पर विचार कर चुकी है।

संशोधन संख्या 1977 को उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी जाती, क्योंकि इसका उद्देश्य मसौदे में ही शुद्धि करना है।

(संशोधन संख्या 1978 और 1979 उपस्थित नहीं किये गये।)

संशोधन संख्या 1980 का आशय एक अन्य संशोधन से पूरा हो जाता है, जिसे श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने उपस्थित किया है।

इसके अतिरिक्त खंड (4) के सम्बन्ध में दो संशोधन हैं। उसमें से एक सूची 1 का 25-ए है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** अब इस संशोधन के पहले सूची 2 का संशोधन संख्या 131 आ गया है।

श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

''तारीख 28 मई, 1949 के संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 के संशोधन संख्या 25-ए के स्थान में निम्नलिखित खंड रखा जाये:

'संशोधन की सूची के संशोधन संख्या 1980 के सम्बन्ध में अनुच्छेद 124 के खंड (5) के स्थान में निम्नलिखित खंड रखा जाये:

(4) Subject to the provisions of any law made by Parliament, the conditions of service of members of the staff of the Comptroller and Auditor-General shall be such as may be prescribed by rules made by the Comptroller and Auditor-General:

Provided that the rules made under this clause shall, so far as they relate to salaries, allowances, leave or pensions, require the approval of the President.' ''

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

श्रीमान्, अनुच्छेद 124 के खंड (4) के स्थान पर यह आ जायेगा और इससे उसका अर्थ भी विस्तृत हो जायेगा। इसमें यह भी उपबंध रखा गया है कि अपने कर्मचारियों को दिये जाने वाले वेतनों, भत्तों और निवृत्ति-वेतनों को निश्चित करने में महालेखापरीक्षक राष्ट्रपति से केवल परामर्श ही न लेगा, बल्कि उसकी स्वीकृति भी प्राप्त करेगा। यह सब कुछ सम्बन्धित प्राधिकारियों के विवेक पर निर्भर है क्योंकि इनका प्रभाव उस सिद्धांत पर भी पड़ सकता है, जो भारत सरकार के अधीन अन्य सेवाओं के सम्बन्ध में अपनाया गया हो। इस संशोधन के सम्बन्ध में कोई विवाद नहीं हो सकता, क्योंकि इससे केवल वर्तमान मसौदे में सुधार होता है। श्रीमान्, मैं इसे उपस्थित करता हूं।

(संशोधन संख्या 25-बी और 1981 उपस्थित नहीं किये गये।)

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 1981 के सम्बन्ध में अनुच्छेद 124 के खंड (5) के स्थान में निम्नलिखित खंड रखा जाये:
>
> '(5) The administrative expenses of the office of the Comptroller and Auditor-General, including all salaries, allowances and pensions payable to or in respect of the Comptroller and Auditor-General and members of his staff, shall be charged upon the revenues of India.' ''

श्रीमान्, इसमें तथा अनुच्छेद 124 के खंड (5) में एक ही सिद्धांत सन्निहित है। अन्तर केवल इतना है कि इसमें नियंत्रक-महालेखापरीक्षक के कार्यालय के प्रशासन सम्बन्धी व्यय का उल्लेख है, जिसमें वास्तव में आकस्मिक व्यय, यात्रा-व्यय इत्यादि ही सम्मिलित होंगे। इससे पूरा चित्र सामने आ जायेगा। इसमें कोई नई बात नहीं रखी गई है। श्रीमान्, मैं इस प्रस्ताव को उपस्थित करता हूं।

(संशोधन संख्या 1982 उपस्थित नहीं किया गया।)

***अध्यक्ष:** अब मूल अनुच्छेद पर तथा सभा के सामने जो संशोधन उपस्थित किये गये हैं उन पर विचार-विमर्श हो सकता है।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, इस अनुच्छेद तथा इसके सम्बन्ध में उपस्थित किये हुये संशोधनों के बारे में मुझे थोड़ी सी बातें कहनी हैं। महालेखापरीक्षक का पद इतना महत्त्वपूर्ण है कि इस संविधान के आर्थिक उपबंधों को प्रयोग में लाने वाले अधिकारियों में मैं उसको सर्वप्रथम स्थान देता हूं। महालेखापरीक्षक का विधान मंडल तथा कार्यपालिका से कभी भी कोई सम्बन्ध न रहना चाहिये। वह हमारे धन का प्रहरी होगा। इसलिये उसकी स्थिति इतनी सुदृढ़ बना देनी चाहिये कि उस पर किसी भी बड़े से बड़े व्यक्ति का प्रभाव न पड़ सके। इस दृष्टि से मुझे इसकी प्रसन्नता है कि महालेखापरीक्षक को शक्तिशाली बनाने के लिये कुछ संशोधन उपस्थित किये गये

हैं। इस प्रकार के संशोधनों का तथा तदनुसार संशोधित अनुच्छेद का मैं स्वागत करता हूं। मैं यह नहीं चाहता कि महालेखापरीक्षक विधान मंडल के प्रति उत्तरदायी हो, किन्तु मैं यह देखता हूं कि मेरे मित्र श्री कृष्णमाचारी ने अपने संशोधन में कहा है कि:

> ''महालेखापरीक्षक के कार्यालय का प्रशासन सम्बन्धी व्यय, जिसमें नियंत्रक महालेखा-परीक्षक तथा उसके कर्मचारियों को दिये जाने वाले या उनसे सम्बन्धित सब वेतन, भत्ते और निवृत्ति-वेतन सम्मिलित हैं, भारत राजस्व पर भारित होंगे।''

मैं इस संशोधन का, जिसका उद्देश्य यह है कि महालेखा परीक्षक और उसके कार्यालय का व्यय भारत राजस्व पर भारित किया जाये, बहुत विरोध करता हूं। जिस समय भारत-मंत्री इस देश पर शासन करता था उस समय, 1935 के अधिनियम के अधीन, कुछ व्यय राजस्व पर भारित किया जाता था। अब हम अपने देश का शासन करते हैं और हमने ब्रिटिश शासन को समाप्त कर दिया है। जैसा कि मैं कह चुका हूं, महालेखापरीक्षक की स्थिति ऐसी होनी चाहिये कि उस पर किसी व्यक्ति का प्रभाव न पड़ सके। किन्तु साथ ही संसद् को उसके तथा उसके कर्मचारियों के वेतन तथा भत्तों पर विचार करने के अधिकार से वंचित न किया जाना चाहिये। जब विधान मंडल देश के प्रति उत्तरदायी होगा, तो मेरी समझ में नहीं आता कि कुछ व्ययों को राजस्व पर भारित करने की प्रथा क्यों रहने दी जा रही है। इसका अर्थ यह होगा कि सभा को इन विषयों के सम्बन्ध में मत देने का अधिकार न होगा। निःसंदेह हम इसके सम्बन्ध में विचार-विमर्श कर सकेंगे, किन्तु इतने ही से कुछ न होगा। नये संविधान के अधीन हमें व्ययों को राजस्व पर भारित करने की प्रथा को समाप्त कर देना चाहिये। इसलिये मैं यह चाहता हूं कि इस अनुच्छेद का यह भाग निकाल देना चाहिये। यद्यपि मैं इससे पूर्णतया सहमत हूं कि महालेखा परीक्षक को बिल्कुल स्वाधीन होना चाहिये, किन्तु मैं श्री कृष्णमाचारी द्वारा उपस्थित संशोधन का बहुत विरोध करता हूं।

***श्री बी. दास:** श्रीमान्, अनुच्छेद 124 को संशोधित करके जो रूप दिया गया है उस पर मुझे प्रसन्नता है। विदेशी शासन के अधीन मैं पिछली संसद का 23 वर्ष तक सदस्य रहा, जब कि भारत-मंत्री महालेखापरीक्षक को नियुक्त करता था। उसको यह आदेश दिया जाता था कि अर्थ-विभाग की सनकों के विरुद्ध वह कुछ न लिखे। उस समय के यूरोपीय अधिकारियों के सम्बन्ध में यदि कोई अनियमित बातें होती थीं, तो उनके सम्बन्ध में वह कुछ भी नहीं लिख सकता था। हम में से कुछ लोगों के 23 वर्ष तक उत्पीड़न सहने के उपरान्त अब ब्रिटिश शासन समाप्त हो गया है। इसलिये भारत सरकार को सुदृढ़ बनाये रखने के लिये तथा सार्वजनिक व्यय के सम्बन्ध में भारत सरकार के कर्मचारियों को नैतिक सिद्धांतों का अनुसरण करने में समर्थ बनाने के लिये महालेखा परीक्षक को वही स्थिति प्राप्त होनी चाहिये, जो हमने लोक सेवा आयोग के सदस्यों तथा भारत के उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति को प्रदान की है। यह एक प्रसन्नता की बात है कि मसौदा-समिति ने मेरे माननीय मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी के दो संशोधनों के अनुसार अनुच्छेद के मसौदे में परिवर्तन करना उचित समझा और उसे बदल दिया।

[श्री बी. दास]

मुझे इसका आश्चर्य है कि मेरे माननीय मित्र श्री सिधवा 'भारित' व्यय के सम्बन्ध में सहमत न हुए। सम्भवत: श्री सिधवा यह भूल गये थे कि ब्रिटिश शासनकाल में भारत-मंत्री की आज्ञाओं के अधीन भारत-राजस्व के 75 प्रतिशत अंश पर मत नहीं लिया जाता था। नवीन व्यवस्था के अधीन सरकार के कुछ कृत्य राजस्व पर भारित होंगे। वे यह भी भूल गये कि आय-व्ययक के अनुदानों की मांगों में, जो ससंद में स्वीकार की जाती हैं, उधार लिये हुए धन का ब्याज भारित व्यय है। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य व्यय भी भारित होते हैं। इस समय गवर्नर जनरल का व्यय सरकार पर भारित होता है और आगे चलकर राष्ट्रपति का व्यय भी सरकार पर भारित होगा। विधान मंडल के सदस्य गवर्नर जनरल की फ़िजूलखर्ची अथवा महालेखापरीक्षक की अथवा उच्चतम न्यायालय की फ़िजूलखर्ची की आलोचना करने के अधिकार से वंचित न होंगे। हमने भारित व्ययों की सूची में उच्चतम न्यायालय के व्यय का भी उल्लेख किया है। इस सूची में महालेखापरीक्षक के व्यय का भी उल्लेख करने में हम संकोच का अनुभव क्यों करें? इससे उसे ज्ञात रहेगा कि संसद ने उसे कितनी धनराशि प्रदान की है। मेरे माननीय मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने अपने संशोधन में कहा है कि:

> ''परन्तु इस खंड के अधीन बनाये हुए नियमों के लिये जहां तक उनका सम्बन्ध वेतनों, भत्तों, अवकाश अथवा निवृत्ति-वेतनों से होगा राष्ट्रपति की स्वीकृति अपेक्षित होगी।''

संसद द्वारा निर्वाचित मंत्रिमंडल तो आखिर होगा ही। राष्ट्रपति जो मंत्रिमंडल से परामर्श लेकर कार्य करेगा यह देखेगा कि...

***श्री आर.के. सिधवा:** तब सभी कुछ राजस्व पर ही भारित क्यों नहीं कर देते?

***श्री बी. दास:** आपको 'भारित व्यय' को स्वीकार करना ही होगा। अन्य विषयों के सम्बन्ध में मंत्रालयों को हस्तक्षेप न करना चाहिये, क्योंकि आजकल प्रत्येक मंत्रालय उसके लिये स्वीकृत व्यय से हमेशा अधिक व्यय कर देता है और आय व्ययक के नियंत्रण को अथवा आर्थिक नियंत्रण को स्वीकार नहीं करता। मेरे माननीय मित्र श्री सिधवा यह अवश्य ही जानते होंगे कि 118 करोड़ रुपये के अनुपूरक अनुमान 31 मार्च 1949 को संसद की स्वीकृति के लिये उपस्थित किये गये । इसलिये यदि महालेखापरीक्षक और उसके कर्मचारी उच्च स्तर पर न रखे गये, तो संविधान के अधीन उन पर जिस उत्तरदायित्व का भार रखा गया है, उसका निर्वहन उनके लिये दुष्कर हो जायेगा। यही लोक सेवा आयोग तथा उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के सम्बन्ध में भी कहा जा सकता है। इसलिये कुछ व्यय तथा कुछ ब्याज भी राजस्व पर भारित होंगे क्योंकि इस व्यवस्था के अधीन कार्यपालिका का हस्तक्षेप न हो सकेगा। नि:संदेह वाद-विवाद द्वारा संसद हस्तक्षेप कर सकती है और कोई व्यक्ति मेरे माननीय मित्र श्री सिधवा को इस अधिकार से वंचित न करेगा। मैं संशोधित अनुच्छेद 124 का बड़ी प्रसन्नता से समर्थन करता हूं।

**श्री विश्वनाथ दास* (उड़ीसा : जनरल): श्रीमान्, मेरे माननीय मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने जो संशोधन उपस्थित किया है उसमें दो विपरीत दृष्टिकोणों के बीच का दृष्टिकोण अपनाया गया है। इसके पूर्व कि मैं अपने माननीय मित्र के संशोधन की सार्थकता प्रदर्शित करूं, उचित यह होगा कि मैं माननीय सदस्यों को नियंत्रक महालेखापरीक्षक के कृत्यों का दिग्दर्शन कराऊं।

यह कहना गलत होगा कि मेरे माननीय मित्र ने अपने संशोधन द्वारा जो प्रस्ताव उपस्थित किये हैं, उनसे विधान मंडल की शक्ति, प्रतिष्ठा अथवा उत्तरदायित्व किसी प्रकार सीमित अथवा निर्बन्धित हो जाते हैं। हमें इसे समझता है कि विधान मंडल ही विधि बनाने के लिये सक्षम है। विधि का निर्वाचन न्यायपालिका करेगी। श्रीमान्, कार्यपालिका जिस धन को व्यय करेगी, उसकी स्वीकृति विधान सभा प्रदान करेगी और वास्तव में विधान मंडल द्वारा स्वीकृत धन को कार्यपालिका ही यथेष्ट रूप से व्यय कर सकती है। इसकी परीक्षा कौन प्राधिकारी करेगा कि विधान मंडल द्वारा स्वीकृत धन को यथेष्ट रूप से व्यय किया गया है या नहीं? इस महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्व के निर्वहन के लिये विधान मंडल ने विधि के अधीन एक नये प्राधिकारी की व्यवस्था की है और यह प्राधिकारी महालेखापरीक्षक ही है। कार्यपालिका तथा महालेखापरीक्षक के कृत्यों की इस प्रकार निश्चित रूप से परिभाषा करने के उपरान्त प्रश्न यह उठता है कि महालेखापरीक्षक अपने कृत्यों का निर्वहन किस प्रकार करेगा? श्रीमान्, मैं इस सभा का ध्यान अनुच्छेद 124 के सम्बन्ध में कुछ क्षण पूर्व उपस्थित संशोधन संख्या 25-ए की ओर दिलाता हूं, जिसमें यह कहा गया है कि नियंत्रक महालेखापरीक्षक अपने कर्मचारियों को स्वयं नियुक्त करेगा अथवा किसी ऐसे व्यक्ति से नियुक्त करायेगा जिसे वह निदेश करे। इससे महालेखापरीक्षक को कर्मचारियों को पुनर्नियुक्त करने की भी शक्ति प्राप्त हो जाती है। खंड 4-ए द्वारा उसे आवश्यक अतिरिक्त कर्मचारी नियुक्त करने की शक्ति प्रदान की गई है। इस सम्बन्ध में मैं माननीय सदस्यों का ध्यान उस परन्तुक की ओर दिलाता हूं, जिसमें कार्यपालिका के प्रभुत्व द्वारा अर्थात् भारतीय गणराज्य के राष्ट्रपति द्वारा महालेखापरीक्षक की शक्तियां विशेषरूप से निर्बन्धित की गई हैं। मैं उसे इस सभा के सदस्यों को पढ़कर सुनाता हूं।

> ''परन्तु इस खंड के अधीन बनाये हुए नियमों के लिये जहां तक उनका वेतनों, भत्तों अवकाश अथवा निवृत्ति-वेतनों से सम्बन्ध है राष्ट्रपति की स्वीकृति अपेक्षित होगी।''

मैं स्वयं यह चाहता हूं कि यह परन्तुक इस कारण निकाल दिया जाता कि यह महालेखा परीक्षक की स्वाधीनता का अपहरण करता है, क्योंकि उसे वेतनों, भत्तों, अथवा अवकाश सम्बन्धी नियमों की स्वीकृति के लिये कार्यपालिका का मुंह ताकना पड़ेगा। इस सीमा तक महालेखापरीक्षक का कार्यपालिका से किसी प्रकार का सम्बन्ध न रहना तो अलग रहा, उसे उसके अधीन हो जाना पड़ेगा। इसलिये मेरे माननीय मित्र श्री सिधवा कृपया इस ओर ध्यान देंगे कि श्री टी.टी. कृष्णमाचारी के संशोधन में मध्यम मार्ग का अनुसरण किया गया है। आपने यह रक्षण रखा है कि कार्यपालिका के प्रमुख अर्थात् राष्ट्रपति की स्वीकृति

[श्री विश्वनाथ दास]

आवश्यक है, जिसका अर्थ यह है कि वेतनों, भत्तों, अवकाश अथवा निवृत्ति-वेतन सम्बन्धी नियमों के बारे में मंत्रिमंडल की स्वीकृति आवश्यक होगी और इसका अर्थ यह है कि मंत्रिमंडल को विधान मंडल की स्वीकृति अपेक्षित होगी। इससे अधिक और किसी बात की आवश्यकता नहीं है। प्रस्तावित भारित व्यय उस भारित व्यय से बिल्कुल भिन्न है, जिसकी व्यवस्था 1935 के भारत सरकार के अधिनियम के अधीन थी। ब्रिटिश पार्लियामेंट ने इसे ध्यान में रखकर उपबंध रखे थे कि विधान मंडलों का तथा कार्यपालिका का गवर्नर जनरल से कलह हो सकता है, किन्तु हमारे संविधान में इस प्रकार के किसी कलह की कल्पना नहीं की गई है। मैं माननीय सदस्यों का ध्यान अनुच्छेद 125 की ओर फिर दिलाता हूं। उसमें कहा गया है–''महालेखापरीक्षक भारत सरकार के अथवा किसी राज्य के सरकार के लेखे के सम्बन्ध में ऐसे कर्त्तव्यों का पालन करेगा अथवा ऐसी शक्तियों को प्रयोग करेगा, जो संसद द्वारा निर्मित किसी विधि द्वारा अथवा उसके अधीन निर्धारित की गई हों अथवा की जायें'' यह देखा जा सकता है कि नियंत्रक महालेखापरीक्षक को बिल्कुल विधान मंडल के अधीन बना दिया गया है। भारित लेखे के सम्बन्ध में उपबंध इसलिये रखा गया है कि भविष्य में केन्द्रीय कार्यपालिका और महालेखापरीक्षक के उत्तरदायित्व के निर्वहन में कोई कलह अथवा जिच उत्पन्न न हो। इसलिये यह एक यथोचित तथा आवश्यक उपबंध है और इसमें किसी एक दृष्टिकोण को नहीं अपनाया गया है, बल्कि दो विपरीत दृष्टिकोणों के बीच के दृष्टिकोण को अपनाया गया है।

इन शब्दों के साथ मैं श्री कृष्णमाचारी के संशोधनों का समर्थन करता हूं।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से अब इस सम्बन्ध में अधिक आलोचना की आवश्यकता नहीं है।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई : जनरल): अध्यक्ष महोदय, संविधान में महालेखापरीक्षक की जो स्थिति रखी गई है अथवा उपस्थित संशोधनों द्वारा भी उसे जो स्थिति प्रदान की गई है उससे मुझे बहुत संतोष नहीं है। मेरा अपना यह विचार है कि इस प्राधिकारी का स्थान भारतीय संविधान में सबसे महत्त्वपूर्ण है। वही एक ऐसा व्यक्ति होगा जो इस पर देखरेख रखेगा कि संसद ने जिस व्यय के लिये मत दिया है उससे अधिक व्यय न हो अथवा संसद के विनियोग-अधिनियम में जो व्यवस्था की हो उसमें परिवर्तन न किया जाये। यदि इस प्राधिकारी से यह आशा की जाती है कि वह यथोचित रूप से अपने कर्त्तव्यों का पालन करेगा, तो उसे न्यायपालिका के समान स्वाधीन बनाना होगा। मेरा यह निवदेन है कि उसके कर्त्तव्य न्यायपालिका के कर्त्तव्यों से कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। किन्तु उच्चतम न्यायालय सम्बन्धी अनुच्छेदों तथा महालेखापरीक्षक सम्बन्धी अनुच्छेदों की तुलना करने के उपरान्त में यह कहे बिना नहीं रह सकता कि हमने उसे उतनी स्वाधीनता नहीं दी है जितनी हमने न्यायपालिका को प्रदान की है। मेरी अपनी यह धारणा है कि उसे न्यायपालिका से कहीं अधिक स्वाधीनता प्राप्त होनी चाहिये।

मैं यह बताना चाहता हूं कि न्यायपालिका को हमने जिस स्थिति में रखा है और महालेखापरीक्षक को हम जिस स्थिति में रखने जा रहे हैं, उनमें एक अन्तर है। पिछले

सप्ताह ही मैंने मूल अनुच्छेद 122 के सम्बन्ध में यह संशोधन उपस्थित किया था कि उच्चतम न्यायालय को अपने अधिकारियों तथा सेवकों को नियुक्त करने की शक्ति प्रदान है। इस अनुच्छेद के मसौदे में तथा उपस्थित संशोधनों में मुझे यह दिखाई देता है कि महालेखा परीक्षक को इस प्रकार की कोई शक्ति नहीं प्राप्त होने जा रही है। इस शक्ति के अभाव का अर्थ यह है कि महालेखापरीक्षक के कर्मचारियों को कार्यपालिका नियुक्त करेगी। चूंकि कर्मचारी कार्यपालिका द्वारा नियुक्त होंगे, इसलिये वे उसी के अनुशासन में रहेंगे। इस सम्बन्ध में मुझे कुछ भी सन्देह नहीं है कि यदि किसी प्राधिकारी को अपने अधीनस्थ कर्मचारियों का अनुशासन रखने की शक्ति प्राप्त नहीं है, तो उसके प्रशासन का पतन हो जायेगा। इस दृष्टि से मेरे विचार से लोक हित में तो यह होता कि महालेखा-परीक्षक को यह शक्ति दी जाती। किन्तु लोग भावनावश महालेखापरीक्षक को इस प्रकार की शक्ति देने के लिये तैयार नहीं है। इस समय मेरे विचार से लोगों की भावना का आदर करने के अतिरिक्त और कुछ नहीं किया जा सकता। साधारणतया मेरा यही विचार है।

जहां तक संशोधनों का सम्बन्ध है, मैं श्री टी.टी. कृष्णमाचारी द्वारा उपस्थित संशोधनों को तथा श्री बी. दास द्वारा उपस्थित एक संशोधन को अर्थात् संशोधन संख्या 1975 को स्वीकार करता हूं। संविधान के मसौदे में अथवा विभिन्न अन्य संशोधनों में महालेखा परीक्षक को जो स्थिति प्रदान की गई है, उसमें इन संशोधन द्वारा अवश्य बहुत कुछ सुधार होता है। परन्तु मैं यह देखता हूं कि इन संशोधनों द्वारा संशोधित अनुच्छेद पर भी श्री सिधवा को आपत्ति है। यदि मैं उन्हें ठीक समझ पाया हूं, तो उनकी आपत्ति यह है कि महालेखा परीक्षक का व्यय संचित निधि पर भारित न करके साधारण प्रदाय समझा जाये और सेवाओं पर संसद मत दे। उनका तर्क यह है कि इसके लिये कोई कारण नहीं है कि संसद को महालेखापरीक्षक के व्यय तथा प्रशासन सम्बन्धी व्यय पर विचार-विमर्श करने के अधिकार से वंचित किया जाये। मेरे विचार से मेरे माननीय मित्र श्री सिधवा कुछ व्ययों का भारत राजस्व पर भारित करने के अर्थ को बिल्कुल गलत समझे हैं। यदि मेरे माननीय मित्र श्री सिधवा अनुच्छेद 93 को देखें, जिसमें इस विषय का उल्लेख है, तो उन्हें ज्ञात हो जायेगा कि यद्यपि कुछ व्यय भारत राजस्व पर भारित किये गये हैं किन्तु उन्हें इस प्रकार भारित करने से ही संसद इन व्ययों पर विचार-विमर्श करने के अधिकार से वंचित नहीं हो जाती। विचार-विमर्श करने का अधिकार तो उसे प्राप्त होगा ही। केवल मत देने का अधिकार नहीं दिया गया है। इस विषय पर मतदान नहीं हो सकता। इस पर मतदान इस कारण नहीं हो सकता कि जिस प्रकार हम यह नहीं चाहते कि महालेखापरीक्षक जिन बातों को आवश्यक समझे उन में कार्यपालिका बहुत हस्तक्षेप न करे उसी प्रकार हम यह भी नहीं चाहते कि विधान मंडल के बहुत से सदस्य जो मितव्यय प्रेमी होने से किसी न किसी कारणवश असंतुष्ट हों, महालेखापरीक्षक के सुयोग्य प्रशासन में हस्तक्षेप करें। इसी कारण यह उपबंध रखा गया है। मेरे मित्र श्री सिधवा यह भी अनुभव करेंगे कि यह कोई असाधारण उपबंध नहीं है। वास्तव में यह उस उपबंध के अनुरूप है जो उच्चतम न्यायालय के सम्बन्ध में रखा गया है। इसलिये मेरे विचार से इस विषय के सम्बन्ध में श्री सिधवा की आलोचना को स्वीकार करने के लिये कोई कारण नहीं है।

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

श्रीमान्, मेरा यह प्रस्ताव है कि यह अनुच्छेद संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया जाये। मैं श्री बी. दास के सूची 1 के संशोधन संख्या 125 को तथा श्री टी.टी. कृष्णमाचारी के संशोधन संख्या 130 संशोधित संख्या 31 तथा सूची 1 के संशोधन संख्या 25-सी को स्वीकार करता हूं।

*__अध्यक्षः__ अब मैं संशोधनों पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है कि:

''संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 1975 के सम्बन्ध में भाग 5 के अध्याय 5 में जहां कहीं (जिस में शीर्षक भी सम्मिलित) 'Auditor-General' शब्द आया है उसके स्थान में 'Comptroller and Auditor-General' शब्द रखे जायें।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

*__अध्यक्षः__ प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 124 के खंड (1) में 'President' शब्द के बाद 'by warrant under his hand and seal' शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

*__अध्यक्षः__ प्रस्ताव यह है कि:

''संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 1975 के सम्बन्ध में, अनुच्छेद 124 के खंड (1) के बाद निम्नलिखित नवीन खंड प्रविष्ट किया जाये:

'(1-a.) Every person appointed to be the Comptroller and Auditor-General of India shall, before he enters upon his office, make and subscribe before the President or some person appointed in that behalf by him an affirmation or oath according to the form set out for the purpose in the Third Schedule.' ''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

*__अध्यक्षः__ प्रस्ताव यह है कि:

''(तीसरे सप्ताह की) तारीख 28 मई, 1949 की सूची 1 के संशोधित संख्या 25-ए के स्थान में निम्नलिखित रखा जाये:

'संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 1980 के सम्बन्ध में अनुच्छेद 124 के खंड (4) के स्थान में निम्नलिखित खंड रखा जाये:

''(4) Subject to the provisions of any law made by Parliament, the conditions of service of members of the staff of the Comptroller and

Auditor-General shall be such as may be prescribed by rules made by the Comptroller and Auditor General:

Provided that the rules made under this clause shall, so far as they relate to salaries, allowances, leave or pensions, require the approval of the President.' ''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 1981 के सम्बन्ध में अनुच्छेद 124 के खंड (5) के स्थान में निम्नलिखित खंड रखा जाये:

'(5) The administrative expenses of the office of the Comptroller and Auditor-General, including all salaries, allowances and pensions payable to or in respect of the Comptroller and Auditor-General and members of his staff, shall be charged upon the revenues of India.' ''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 124, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 124, संशोधित रूप में, विधान का अंग बना दिया गया।

नवीन अनुच्छेद 124-ए

***अध्यक्ष:** प्रोफेसर शाह ने अनुच्छेद 124-ए की सूचना दी है।

***प्रो. के.टी. शाह** (बिहार : जनरल): श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

''निम्नलिखित नवीन अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:

'124-A. The Auditor-General shall be appointed from among persons qualified as Registered Accountants or holding any other equivalent qualifications recognised as such, and having not less than ten years' practice as such Auditors.' ''

[प्रो. के.टी. शाह]

श्रीमान्, यह एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण अनुच्छेद है, क्योंकि जब से अर्थ-विभाग का संगठन हुआ है, महालेखापरीक्षक हमेशा असैनिक सेवा (सिविल सर्विस) के लोगों में से चुना जाता रहा है। असैनिक सेवा के लोग विशेष प्रकार की शिक्षा प्राप्त किये हुए रहते हैं और उनका विशेष प्रकार का दृष्टिकोण हो जाता है। यह नहीं कहा जा सकता कि यह दृष्टिकोण महालेखापरीक्षक के कृत्यों और कर्तव्यों के पालन के लिये उपयुक्त ही होता है। यदि हम यह चाहते हैं कि महालेखापरीक्षक का कार्य योग्यता से तथा समुचित ढंग से हो, क्योंकि लेखे की यथोचित परीक्षा के लिये यह आवश्यक है, तो मेरे विचार से महालेखापरीक्षक की अर्हता, व्यावहारिक अनुभव तथा विशेष ज्ञान का उल्लेख करना होगा। सरकार का लेखाकर्म किसी निश्चित तिथि तक धन-प्राप्ति और धन-व्यय पर आधृत है, किन्तु राज्य जिन वृहत् वाणिज्य-सम्बन्धी उपक्रमों को आरम्भ करने जा रहा है, उनको दृष्टि में रखते हुए तथा उसे कारबारियों, ठेकेदारों आदि से जो विभिन्न प्रकार के सम्बन्ध स्थापित करने पड़ते हैं उनको ध्यान में रखते हुए, मेरे विचार से यह आवश्यक है कि लेखा परीक्षा ऐसे लोग करें जो कारोबार के व्यवहार से परिचित हों और इसलिये योग्यता से सेवा करने में समर्थ हों। मैंने कम से कम पंजीबद्ध अंकिकों की अर्हता का प्रस्ताव रखा है। हाल में स्वीकृत विधि के अधीन ये लोग शासन प्राप्त (चार्टर्ड) अंकिक कहे जायेंगे और उन्हें इस प्रकार का कार्य करने का कुछ वर्षों का अनुभव होगा। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि उन्हें विशेष अर्हता तथा लेखा परीक्षक का व्यावहारिक अनुभव प्राप्त होना चाहिये। मेरे विचार से ऊंची नियुक्तियों के सम्बन्ध में साधारण लोक-सेवाओं से, चाहे भारतीय प्रशासन सेवाओं से या भारतीय असैनिक सेवाओं से, लोगों को उन्नति देकर अथवा बदली करके रखना उपयुक्त न होगा। जिस प्रकार हमने न्याय-सम्बन्धी सेवाओं के बारे में यह रखा है कि केवल किसी सेवा की सदस्यता ही पर्याप्त नहीं है बल्कि विशेष ज्ञान तथा अनुभव की आवश्यकता है, उसी प्रकार मेरा यह सुझाव है कि हम इस सम्बन्ध में भी संविधान में कुछ अर्हता और विशेष ज्ञान तथा व्यावहारिक अनुभव निर्धारित करें। संशोधन में तो केवल इसका उल्लेख है कि दस वर्ष का व्यावहारिक अनुभव आवश्यक होगा, किन्तु यदि संशोधन स्वीकार कर लिया गया तो वास्तव में चोटी के लोग लिये जायेंगे। इस समय इस प्रकार के लोगों की आय इतनी अधिक होती है कि सम्भवत: राज्य उनको उतना वेतन हीं दे सकता है किन्तु साथ ही इस पद का जो महत्त्व होगा और जो प्रतिष्ठा होगी उससे ख्यातनामा लोग आकर्षित होंगे। न्याय-सम्बन्धी पदों पर भी ऐसे वकील आ रहे हैं जिनकी बहुत ऊंची आय है। इसलिये सभा से मैं यह सिफारिश करता हूं कि यह संशोधन स्वीकार कर लिया जाये।

***अध्यक्ष:** क्या कोई सदस्य इस पर बोलना चाहते हैं?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** अध्यक्ष महोदय, मैं यह कहूंगा कि प्रोफेसर के.टी. शाह का संशोधन एक मौलिक संशोधन है और वाणिज्य जगत में प्रचलित विचारधाराओं के अनुरूप है किन्तु मेरे विचार से वह महालेखा परीक्षक को नियुक्त करने की इस देश की तथा अन्य देशों की प्रथा के बिल्कुल विरुद्ध है। वास्तव में यह आवश्यक नहीं है कि महालेखा परीक्षक अवश्य ही अंकिक हो। उसे कई अन्य प्रकार के कर्त्तव्यों का भी पालन करना

होगा और उनका पालन करने के लिये उसे पूरे प्रशासन का ज्ञान होना चाहिये। मेरे विचार से भारत के महालेखापरीक्षक को नियुक्त करने की वर्तमान प्रणाली सम्भवतः सर्वोत्तम है। हमारे यहां कुछ बहुत ही अच्छे महालेखापरीक्षकों ने काम किया है, जो पहले प्रशासक थे और अर्थ-विभाग में रह चुके थे तथा विभिन्न स्थानों में महालेखापरीक्षक तथा उच्च पदधारी रह चुके थे। इसलिये यह प्रश्न केवल गणित के अथवा लेखे का ज्ञान का नहीं है बल्कि पूरे प्रशासन के ज्ञान का है। इस दृष्टि से मेरे विचार से यह सभा इसे स्वीकार करेगी कि प्रोफेसर शाह की धारणा कितनी ही बोधगम्य क्यों न हो, किन्तु है वह एक अत्यंत संकुचित धारणा ही। यदि किसी व्यक्ति को केवल पंजीबद्ध अंकिक की अर्हता प्राप्त हो तो वह महालेखापरीक्षक होने के योग्य नहीं समझा जा सकता। यदि आप प्रशासन सम्बन्धी अनुभव का प्रतिबंध नहीं रखते हैं, तो ऐसे ही लोग सामने आयेंगे। पंजीबद्ध अंकिकों का मुझे कुछ अनुभव है और मेरे विचार से उनका काम ऐसा नहीं है कि उसे प्रशासन का तथा लेखे का पर्याप्त ज्ञान रखने वाला कोई व्यक्ति न कर सके। भारत सरकार का जो कोई भी महालेखापरीक्षक अथवा महांकिक होता है उसे पंजीबद्ध अंकिक के कार्य का पूर्ण ज्ञान होता है। मुझे कोई ऐसा कारण नहीं दिखाई देता जिसके आधार पर मैं प्रोफेसर शाह के दृष्टिकोण का समर्थन करूं और सभा से उनके संशोधन को स्वीकार करने के लिये आग्रह करूं। उससे वर्तमान व्यवस्था तो समाप्त हो ही जायेगी, किन्तु साथ ही भविष्य की सरकार के लिये किसी उपयुक्त व्यक्ति को महालेखापरीक्षक के पद पर नियुक्त करना कठिन हो जायेगा। श्रीमान्, मैं इस संशोधन का विरोध करता हूं।

***श्री लक्ष्मीनारायण साहू** (उड़ीसा : जनरल): सभापति जी, प्रोफेसर के.टी. शाह ने जो संशोधन दिया है मैं उसकी ताईद करता हूं। इसलिये कि जो आडिटर जनरल का काम करेंगे अगर उनको आडिट का काम मालूम नहीं होगा तो वह कैसे आडिटर जनरल बनेंगे। हम लोगों ने चार्टर्ड एकाउंटेंट बिल पास किया है उसमें कम से कम जो दस वर्ष आडिट का काम किये होगा उसी को रजिस्टर्ड एकाउंटेंट बनायेंगे नहीं तो नहीं। और जो दस वर्ष या इससे ज्यादा गवर्नमैंट में आडिट का काम किये हैं उनको शायद छोड़ देंगे लेकिन जो जी.डी.ए. हैं उनको कम से कम एक वर्ष काम करना चाहिये जब रजिस्टर्ड एकाउंटेट बन सकते हैं। हम लोगों ने उनके लिए इतना कष्ट इसीलिये रख दिया है कि हमारा आडिट का काम अच्छी तरह हो। तो जो हम लोगों का सबसे बड़ा आडिटर होगा उसको तो आडिट का कुछ न कुछ पास होना ही चाहिये। जब तक उनको आडिट का कुछ पास नहीं होगा तब तक उनको रखना कैसे मुमकिन होगा। यह मुझे मालूम नहीं होता। इसीलिये मैं प्रोफेसर के.टी. शाह के संशोधन की ताईद करता हूं और समझता हूं कि ऐसा होना चाहिये।

***अध्यक्षः** मेरे विचार से इस प्रस्ताव पर अन्य कोई सदस्य नहीं बोलने जा रहे हैं। मैं अब उस पर मत लूंगा।

[अध्यक्ष]

प्रस्ताव यह है कि:

''निम्नलिखित नवीन अनुच्छेद प्रविष्ट किया जाये:

124-A. The Auditor-General shall be appointed from among persons qualified as Registered Accountants or holding any other equivalent qualifications recognised as such, and having not less than ten years' practice as such Auditors.' ''

संशोधन गिर गया।

अनुच्छेद 125

***अध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 125 को उठाते हैं। इसके सम्बन्ध में एक संशोधन है। संशोधन संख्या 1984, जो पंडित हृदयनाथ कुंजरू के नाम से है।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं आपकी अनुमति से अपने संशोधन में स्थानीय प्राधिकारी का उल्लेख नहीं रहने देना चाहता। यदि आप मुझे इसकी अनुमति दें तो मेरा संशोधन इस प्रकार हो जायेगा:

''अनुच्छेद 125 में 'and of the Government of any State' शब्दों के स्थान में 'the Government of any State or any other authority' शब्द रखे जायें।''

मेरे संशोधन का उद्देश्य यह है कि संसद को नियंत्रक-महालेखापरीक्षक को अतिरिक्त कार्य देने की शक्ति होनी चाहिये। अब हम निगमों को स्थापित करने जा रहे हैं और दामोदर घाटी निगम को स्थापित कर ही चुके हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि भविष्य में हम ऐसे अन्य निगमों को भी स्थापित करेंगे। जहां तक मुझे स्मरण है, दामोदर घाटी निगम अधिनियम में यह उपबंध है कि यद्यपि निगम को यह अधिकार है कि वह अपने लेखे की परीक्षा अपने नियुक्त किये हुए लेखा परीक्षकों से करवाए किन्तु साथ ही सरकार भी महालेखा परीक्षक से इस सम्बन्ध में अपनी इच्छानुसार कार्य करने के लिये कह सकती है। श्रीमान्, मेरी यह इच्छा है कि इस स्थिति को बनाये रखा जाना चाहिये, विशेषतया इसलिये कि इस प्रकार के नियमों की संख्या बढ़ने वाली है। भारतीय-रेलवे-परिपृच्छा समिति ने यह सिफारिश की है कि रेलवे के प्रबंध के लिये एक रेलवे प्राधिकार-संस्था की स्थापना होनी चाहिये। यह प्राधिकार संस्था अस्तित्व में आने पर छ: अथवा सात सौ करोड़ की सम्मत्ति पर और लगभग दो सौ करोड़ के व्यय पर नियंत्रण रखेगी। चूंकि स्वायत्तशासी सभी निगमों की सम्पत्ति सरकार की होगी इसलिये यह आवश्यक है कि यह शक्ति प्राप्त हो कि यदि वह चाहे तो वह अपनी स्थापित की हुई प्राधिकार संस्थाओं की आर्थिक स्थिति के सम्बन्ध में पूछताछ कर सके और इस उद्देश्य से महालेखापरीक्षक से उनके लेखे की परीक्षा के लिये जिस कार्य को भी वह उचित समझे, करने को कहे यह आवश्यक नहीं है कि संसद इस कार्य को करे। किन्तु उसे यह शक्ति प्राप्त होनी चाहिये कि उसने जो निगम स्थापित किये हैं, उनके लेखे की परीक्षा के लिये वह महालेखा परीक्षक को

निदेश करे। राज्य ने इन निगमों पर करोड़ों रुपया लगाया है अथवा लगायेगा। इसलिये उसे विधि द्वारा इसके लिये बाध्य न करना चाहिये कि वह इन्हीं निगमों द्वारा नियुक्त लेखा परीक्षकों के प्रतिवेदनों पर ही निर्भर रहे। इसका अर्थ यह नहीं है कि इन निगमों का अविश्वास किया जा रहा है। मैं इन निगमों के सदस्यों अथवा इनके नियुक्त किये हुए लेखा परीक्षकों की सच्चाई पर आक्षेप नहीं कर रहा हूं। मैं केवल यह चाहता हूं कि यह सामान्य सिद्धांत अपनाया जाये कि महालेखा परीक्षक की शक्ति का विस्तार हो सकता है, ताकि संसद को उसकी स्थापित की हुई प्राधिकार संस्थाओं के प्रबंध की परीक्षा करवाने के लिये एक स्वाधीन प्राधिकारी प्राप्त हो।

श्रीमान्, मुझे आशा है कि दामोदर-घाटी-निगम-अधिनियम के सम्बन्ध में जो कुछ किया गया है, उसे दृष्टि में रखते हुए यह सभा इस संशोधन को स्वीकार कर लेगी।

(संशोधन संख्या 25-डी और संशोधन संख्या 1985 उपस्थित नहीं किये गये।)

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1986, जो डा. अम्बेडकर के नाम से है।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''अनुच्छेद 125 की व्याख्या के स्थान में निम्नलिखित व्याख्या रखी जाये:
>
> '*Explanation.*—In this article the expression 'law made by Parliament' includes any law, ordinance, order, byelaw, rule or regulation passed or made before the commencement of this Contitution and for the time being in force in the territory of India.' ''

सभा को सम्भवत: यह स्मरण होगा कि महालेखा परीक्षक के कृत्यों का नियमन संसद की किसी विधि द्वारा नहीं होता है किन्तु गवर्नर जनरल को भारत सरकार के 1935 के अधिनियम द्वारा प्रदान की हुई शक्तियों के अधीन जारी किये हुए अध्यादेश, आदेश, उपविधि, नियम, विनियम इत्यादि द्वारा होता है। इसलिये गवर्नर जनरल द्वारा जारी किये हुए अध्यादेशों, आदेशों, उपविधियों, नियमों और विनियमों को जीवित रखने के लिये यह आवश्यक है कि व्याख्या को कुछ बढ़ाया जाये ताकि उसमें ये आदेश भी सम्मिलित हो सकें।

***श्री आर.के. सिधवा:** अध्यक्ष महादेय, इस अनुच्छेद का सम्बन्ध संसद द्वारा निर्धारित महालेखापरीक्षक की शक्तियों और कृत्यों से है। श्रीमान्, हमने अभी एक ऐसा अनुच्छेद स्वीकार किया है जिसके द्वारा महालेखापरीक्षक को बहुत कुछ स्वाधीन शक्तियां प्रदान की गई हैं। इस अनुच्छेद द्वारा संसद को कई अन्य विषयों के सम्बन्ध में भी विधि बनाने की शक्ति हो गई है। यद्यपि मैं इसका स्वागत करता हूं कि महालेखा परीक्षक को स्वाधीन बनाया गया है और जो कुछ डा. अम्बेडकर ने कहा है उससे सहमत हूं और

[श्री आर.के. सिधवा]

महालेखापरीक्षक को लेखे की परीक्षा के सम्बन्ध में सभी शक्तियां प्रदान करने के लिये उसके नाम के आगे 'नियंत्रक' शब्द जोड़ने के लिये उनकी प्रशंसा करता हूं, किन्तु मेरी समझ में यह नहीं आता कि कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण शक्तियों के सम्बन्ध में ससंद से विधि बनाने के लिये क्यों कहा जा रहा है। मैं एक उदाहरण दूंगा। इस समय महालेखापरीक्षक को किसी ऐसे धन-पत्र के लिये स्वीकृति देने का अधिकार नहीं है जिसकी धनराशि आय व्ययक के अनुदान से अधिक हो। कार्यपालिका की बनाई हुई इस आशय की एक विधि है। इसकी उपेक्षा करके यदि कोई मंत्रिमंडल आय-व्ययक के अनुदान से अधिक धनराशि व्यय कर देता है और महालेखापरीक्षक उसे सम्बन्धित मंत्री के ध्यान में लाता है, तो वह महालेखापरीक्षक से धनपत्र को स्वीकार कर लेने के लिये कहता है, क्योंकि वह यह समझता है कि उसे सभा का विश्वास प्राप्त है और यदि उसे अनुपूरक अनुदान के रूप में सभा के सम्मुख रखा जायेगा तो सभा उसे स्वीकार कर लेगी। इस समय नियम के होते हुए भी महालेखापरीक्षक कुछ नहीं कर सकता। वह केवल कागजों पर लेखा परीक्षा सम्बन्धी आपत्ति की मुहर लगा देता है और सम्बन्धित मंत्री के संकेत से धन-पत्र को स्वीकार कर लेता है। इस प्रकार कार्यपालिका के बनाये हुए नियम का उद्देश्य महालेखापरीक्षक के उसकी उपेक्षा करने से समाप्त हो जाता है, क्योंकि वह यह समझता है कि मंत्री को सभा का विश्वास प्राप्त है और वह आपत्ति ही क्यों करे। श्रीमान्, यदि किसी मंत्री की यह धारणा हो कि चूंकि उसे सभा का विश्वास प्राप्त है इसलिये वह महालेखापरीक्षक को धन-पत्र स्वीकार करने के लिये बाध्य कर सकता है तो यह जनतंत्र का उपहास ही होगा। वह लोगों का, लोगों के लिये तथा लोगों द्वारा शासन होगा। मंत्री को लोगों का विश्वास प्राप्त होने का यह अर्थ नहीं है कि वह संसद के निर्णय की उपेक्षा करे। यह एक महत्त्वपूर्ण बात है और मैं यह चाहता हूं कि इसका संविधान में समावेश किया जाये कि महालेखापरीक्षक किसी ऐसी धनराशि को स्वीकार न करे जो आय-व्ययक के अनुदान से अधिक हो। जैसा कि मैंने एक दिन कहा था, मेरे सामने यह हुआ है कि 31 मार्च को सभा को 130 करोड़ जैसी बड़ी धनराशि को अनुपूरक अनुदान के रूप में स्वीकार करने के लिये बाध्य होना पड़ा। यद्यपि सदस्य इसके विरुद्ध थे किन्तु वे मंत्रिमंडल को पशोपेश में नहीं डालना चाहते थे। यदि इस प्रकार का उपबंध संविधान में होता तो किसी को भी, न महालेखापरीक्षक को, न सम्बन्धित मंत्री को, न सभा को, संविधान की उपेक्षा करने का साहस होता। नियम अथवा विनियमों की उपेक्षा हो सकती है किन्तु संविधान की उपेक्षा नहीं हो सकती है। इसलिये मैं आशा करता हूं कि मेरे मित्र डा. अम्बेडकर इस विषय पर विचार करेंगे और महालेखापरीक्षक को पूरी शक्तियां प्रदान करेंगे तथा ऐसी व्यवस्था करेंगे कि कोई व्यक्ति उसके कार्य में हस्तक्षेप न कर सके। यदि आप आपात के कारण 130 करोड़ रुपये की धनराशि स्वीकार कर लेंगे (यद्यपि यह आय-व्ययक की कुल धनराशि की एक तिहाई धनराशि है) तो यह बहुत ही अनुचित और खेदजनक बात होगी।

मैं अपने मित्र श्री कुंजरू के संशोधन से पूर्णतया सहमत हूं। मैं तो इससे आगे बढ़ने के लिए तैयार हूं और यह चाहता हूं कि स्थानीय प्राधिकारी ही सम्मिलित न किये जायें

बल्कि स्थानीय यदि कोई स्थानीय निकाय महालेखापरीक्षक अथवा उसके कर्मचारियों की सहायता चाहे तो उसे वह सहायता प्रदान की जानी चाहिये। स्थानीय निकायों की दशा बहुत ही खराब है और यदि महालेखापरीक्षक अपने कर्मचारियों को भेजकर उनकी सहायता करेगा तो उनकी दशा सुधर सकती है।

मुझे इतना ही कहना है और मैं आशा करता हूं कि मेरी पहली बात पर डा. अम्बेडकर विचार करेंगे।

***डा. पी.एस. देशमुख** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): श्रीमान्, श्री कुंजरू के संशोधन का उद्देश्य यह है कि महालेखापरीक्षक को केवल सरकारों के लेखों की ही परीक्षा करने की शक्ति प्राप्त न हो बल्कि कई स्वाधीन निगमों और अन्य निकायों के लेखों की भी परीक्षा करने की शक्ति प्राप्त हो। जहां तक मूल अनुच्छेद का सम्बन्ध है उसमें व्याख्या के रूप में यह उपबंध है कि संसद महालेखापरीक्षक को किसी विशेष संगठन अथवा निकाय के सम्बन्ध में प्राधिकार दे सकती है और समय-समय पर बनाई हुई अपनी विधियों में यथोचित उपबंध रख सकती है। डा. अम्बेडकर ने जिस संशोधन का प्रस्ताव रखा है उससे अब यह व्याख्या संशोधित हो जाती है और अब इस संशोधित व्याख्या में न केवल वर्तमान विधि बल्कि अध्यादेश, उपविधि, नियम और विनियम भी, जो संविधान के प्रयोग में आने के पूर्व स्वीकार किये गये हों और इस समय प्रवर्त्तन में हों, सम्मिलित किये गये हैं।

इसके अतिरिक्त ये शब्द भी रखे गये हैं—"जो संसद द्वारा निर्मित विधि द्वारा अथवा उसके अधीन निर्धारित किये गये हैं या निर्धारित किये जायें।" इन शब्दों का उल्लेख अनुच्छेद ही में है। इस दृष्टि से, मेरे विचार से, जिस संशोधन का प्रस्ताव किया गया है वह अनावश्यक है। उद्देश्य यह है कि न केवल सरकारी लेखे की बल्कि उन सभी महत्त्वपूर्ण निकायों के लेखों की भी यथोचित परीक्षा हो, जो समय-समय पर स्थापित किये जायें। इस उद्देश्य की पूर्ति संसद द्वारा स्वीकृत विधियों, नियमों और विनियमों से होगी। यह संसद पर निर्भर है कि वह यह देखे कि महालेखा परीक्षक को किन्हीं निकायों के सम्बन्ध में प्राधिकार देना आवश्यक है या नहीं इस सम्बन्ध में यथोचित व्याख्या करे। इसलिये इस अनुच्छेद में स्थानीय निकायों तथा अन्य प्रकीर्ण निगमों और संगठनों को सम्मिलित करना आवश्यक नहीं है। इसलिये मेरा यह निवेदन है कि चूंकि अनुच्छेद में इस सम्बन्ध में यथेष्ट उपबंध है, इसलिये पंडित कुंजरू के संशोधन को स्वीकार करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

मेरे मित्र श्री सिधवा ने सभा का ध्यान महालेखापरीक्षक पद की महत्ता की ओर आकर्षित किया और यह कहा कि इस आशय का एक उपबंध रखना चाहिये कि महालेखापरीक्षक किसी समय भी आय-व्ययक में से स्वीकृत धन से अधिक व्यय न होने देगा। मेरे विचार से यह उपबंध भी अनावश्यक है। हमने पिछले वर्ष देखा कि आय-व्ययक अनुमानों का उतना आदर नहीं किया जितना कि किया जाना चाहिये था। किन्तु यह असाधारण बात हुई थी और मेरे विचार से कोई भी जनतंत्रात्मक संसद इसे दुबारा न होने देगी। यह नियम सभी को विदित है कि किसी सरकार, संगठन अथवा कार्यपालिका को आय-व्ययक

[डा. पी.एस. देशमुख]

में स्वीकृत धन से अधिक व्यय न करना चाहिये। इसलिये संविधान में इस आशय का कोई उपबंध प्रविष्ट करना अनावश्यक है। यदि किसी समय कार्यपालिका इस समुचित तथा आधारभूत सिद्धांत का खंडन करे तो संसद को उसे यथोचित रूप से दंडित करने के लिये तैयार रहना चाहिये।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, यदि मेरे मित्र श्री कुंजरू अपने संशोधन, से 'or any local' (अथवा कोई स्थानीय) शब्दों को निकाल दें तो मैं उसे स्वीकार करने के लिये तैयार हूं।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू:** मैंने उन्हें निकाल दिया है।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** यह मैं इसलिये कह रहा हूं कि स्थानीय लेखा परीक्षा प्रान्तीय सरकारों के अधिकार में है। किन्तु 'other authority' (अन्य प्राधिकारी) शब्दों को जोड़ना आवश्यक हो सकता है और उपयोगी भी सिद्ध हो सकता है। जैसा कि वे स्वयं कह चुके हैं, भारत सरकार की नीति यह है कि ऐसे कारबारों के सम्बन्ध में, जिनका प्रबंध विभागों द्वारा नहीं हो सकता, बहुत से नियम स्थापित किये जायें और इसलिये यह आवश्यक है कि भारत सरकार इन निगमों के लेखों के परीक्षण का प्रबंध करे। इस स्थिति में मेरे विचार से यह उचित ही होगा कि केन्द्रीय सरकार को इसकी शक्ति दी जाये कि वह इस प्रकार की सभी प्राधिकारी-संस्थाओं के लेखों की परीक्षा करने की आज्ञा अपने महालेखापरीक्षक को दे सके। जिस परिवर्तन का मैंने सुझाव दिया है उसके साथ मैं इस संशोधन को स्वीकार करने के लिये तैयार हूं।

मेरे मित्र श्री सिधवा ने कहा है कि महालेखा-परीक्षक के कर्त्तव्यों के सम्बन्ध में बहुत से नियम कार्यपालिका द्वारा बनाये जाते हैं और मैंने जिस संशोधन का सुझाव रखा है उसके अनुसार भी वही शक्तियां प्रयोग में आयेंगी जो पहले प्रयोग में थीं और इसलिये कार्यपालिका को ही महालेखापरीक्षक के कर्त्तव्यों को निर्धारित करने का प्राधिकार प्राप्त होगा। यह स्पष्ट है कि यह स्थिति तर्कसंगत नहीं है क्योंकि जिस पदाधिकारी से यह आशा की जाती है कि वह अर्थ के प्रशासन के सम्बन्ध में कार्यपालिका पर नियंत्रण रखेगा उसके कर्त्तव्य कार्यपालिका के ही बनाये हुए नियमों द्वारा निर्धारित होंगे। इस सम्बन्ध में मैं अपने माननीय मित्र श्री सिधवा से केवल यह कह सकता हूं कि ये उपबंध बहुत कुछ अक्षरश: 1935 के भारत सरकार के अधिनियम की धारा 151 से, जो राष्ट्रधन की अभिरक्षा के सम्बन्ध में है और धारा 166 से, जो महालेखापरीक्षक के कर्त्तव्यों के बारे गवर्नर-जनरल के बनाये हुए नियमों के सम्बन्ध में है, लिये गये हैं, उस अधिनियम के अधीन यह व्यवस्था थी कि गवर्नर जनरल स्वविवेक से इस सम्बन्ध में नियम बनाये अर्थात् इन नियमों को बनाने में उसके लिये यह आवश्यक न था कि वह मंत्रिमंडल से परामर्श ले। इस सीमा तक महालेखा-परीक्षक के कर्त्तव्यों को निर्धारित करने के लिये गवर्नर-जनरल के बनाये हुए नियमों का कार्यपालिका से कोई सम्बन्ध न होता था। अब हम राष्ट्रपति को इस सम्बन्ध में स्वविवेक से प्रयोग में आने वाली कोई शक्ति नहीं दे रहे हैं और यदि उसे इन नियमों में कोई परिवर्तन करना होगा तो वह अवश्य ही मंत्रिमंडल से अर्थात् कार्यपालिका से परामर्श लेकर इस दिशा में कदम उठायेगा। मैं इसे स्वीकार करता हूं कि

इस सीमा तक यह व्यवस्था तर्कसंगत नहीं है। किन्तु मुझे आशा है कि मेरे मित्र श्री सिधवा, जो अवश्य ही नई संसद के सदस्य बने रहेंगे शीघ्रातिशीघ्र संसद से यह अनुरोध करेंगे कि इन नियमों को विधि का रूप देकर स्थिति में सुधार किया जाये।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 125 में 'and of the Government of any State' शब्दों के स्थान में 'the Government of any State or other authority' शब्द रखे जायें।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 125 की व्याख्या के स्थान में निम्नलिखित व्याख्या रखी जाये:

''*Explanation.*—In this article, the expression 'law made by Parliament' includes any law, ordinance, order, by-law, rule or regulation passed or made before the commencement of this Constitution and for the time being in force in the territory of India.' ''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 125, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 125, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया गया।

अनुच्छेद 126

***अध्यक्षः** अनुच्छेद 126।

(संशोधन संख्या 1987 उपस्थित नहीं किया गया।)

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 126 संविधान का अंग बना लिया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 126 संविधान का अंग बना लिया गया।

अनुच्छेद 127

***अध्यक्षः** अनुच्छेद 127।

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं किः

"अनुच्छेद 127 में 'Parliament' शब्द के स्थान में 'each House of Parliament' शब्द रखे जायें।"

यह केवल एक रस्मी संशोधन हैः

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 127 में 'Parliament' शब्द के स्थान में 'each House of Parliament' शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 127, संशोधित रूप में संविधान का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 127, संशोधित रूप में, संविधान का अंग बना लिया गया।

नवीन अनुच्छेद 127-ए

***अध्यक्षः** इस आशय के एक संशोधन की सूचना मिली है कि एक नवीन अनुच्छेद अर्थात् अनुच्छेद 127-ए जोड़ दिया जाये। यह संशोधन संख्या 1989 है, जो प्रोफेसर शाह के नाम से है।

***प्रो. के.टी. शाहः** श्रीमान्, चूंकि सभा इस संशोधन में सन्निहित सिद्धांत को पहले अस्वीकार कर चुकी है इसलिये मैं इसे उपस्थित नहीं करना चाहता।

अनुच्छेद 128

***अध्यक्षः** अनुच्छेद 128।

अध्याय के शीर्षक के सम्बन्ध में मि. नजीरुद्दीन अहमद ने एक संशोधन की सूचना दी है। उसे हम इस समय छोड़ देते हैं।

संशोधन संख्या 1991 खंडनकारी संशोधन है और इसलिये उसे उपस्थित नहीं किया जा सकता।

संशोधन संख्या 1992 का उद्देश्य मेरे विचार से मसौदे में शुद्धि करना है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान्, 'State' (राज्य) शब्द सर्वत्र प्रयुक्त है। इसलिये इस संशोधन को स्वीकार करने की आवश्यकता नहीं है।

(संशोधन संख्या 1993 और 1994 उपस्थित नहीं किये गये।)

***अध्यक्ष:** तो, अनुच्छेद 128 के सम्बन्ध में कोई संशोधन नहीं है।

प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 128 संविधान का अंग बना लिया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 128 संविधान का अंग बना लिया गया।

अनुच्छेद 129

***अध्यक्ष:** कई संशोधन मेरे सामने हैं। अध्याय के शीर्षक के सम्बन्ध में एक संशोधन श्री नजीरुद्दीन अहमद का है। उसे हम छोड़ देते हैं।

(संशोधन संख्या 1996 और 1997 उपस्थित नहीं किये गये।)

***श्री लक्ष्मीनारायण साहू:** सभापति जी, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

''अनुच्छेद 129 के अन्त में निम्नलिखित जोड़ दिया जाये:

'of whom there shall be at least one from each of the States of Part I of the First Schedule.' ''

सभापति जी, मेरा कहने का मतलब यह है कि देश में जितने भी स्टेट्स होंगे उस स्टेट्स में से एक गवर्नर होना चाहिये। इसका मतलब यह है कि जितने प्रान्त हम बनाते हैं उन प्रान्तों में से हर एक का एक गवर्नर होना चाहिये। जब तक यह नहीं होता, तब तक हर एक प्रान्त की जो आत्म-मर्यादा है, वह ठीक नहीं होगी। इसलिये मैं यह रखना चाहता हूं कि हर एक प्रान्त में कम से कम एक आदमी गवर्नर हो। जब इलेक्शन होगा, तब वहां का होगा और जब इलेक्शन नहीं होगा तब पैनेल से लिया जायेगा। कम से कम स्टेट का आदमी दूसरे प्रान्त में गवर्नर बन सकता है जब उसी प्रान्त में उसको गवर्नर नहीं बनाया जाये।

मैं उड़ीसा प्रान्त से आया हूं और मैं देखता हूं कि जो शासन-प्रबंध अभी चलता है उसमें हम लोगों का अभी तक कोई भाग केन्द्र में नहीं है। सब जगह में, भारतवर्ष के

[श्री लक्ष्मीनारायण साहू]

बाहर भाग लेते हैं उसमें हमारा अभी तक कुछ भाग नहीं है। इसलिये हम लोग इतने संकुचित हो जाते हैं कि हम लोगों का प्रान्त तरक्की नहीं करने पाता। इसलिये मैं चाहता हूं कि इस ओर अधिक ध्यान देना चाहिये।

*__श्री आर.के. सिधवा:__ क्या मैं यह जान सकता हूं कि क्या प्रस्तावक महोदय यह चाहते हैं कि राज्यपाल उसी प्रान्त का हो?

*__अध्यक्ष:__ मेरे विचार से उनका आशय यह है कि प्रत्येक राज्य से एक राज्यपाल होगा भले ही वह दूसरे प्रान्त में नियुक्त किया जाये।

*__श्री ब्रजेश्वर प्रसाद__ (बिहार : जनरल): अध्यक्ष महदेय, मैं यह कह नहीं सकता कि मैं अपने कुछ ऐसे विचारों को व्यक्त कर सकूंगा या नहीं जो मुझे अत्यन्त प्रिय हैं। मेरी यह धारणा है कि भारत के किसी प्रान्त में भी राज्यपाल की आवश्यकता नहीं है। मंडल (डिवीजन) का आयुक्त (कमिश्नर) केन्द्र के प्रशासन-सम्बन्धी अधीक्षण, निदेशन तथा नियंत्रण में रखा जा सकता है। मांडलिक आयुक्तों को अधिक शक्ति दे दीजिये। मेरी यह धारणा है कि विधान मंडल, मंत्रिमंडल तथा राज्यपाल सभी, प्रान्तों के लिये हानिकारक है।

श्रीमान्, आप से अच्छी तरह इसे और कोई नहीं जानता कि आजकल प्रान्तों में प्रशासन कार्य किस प्रकार चल रहा है। मैं यह जानता हूं कि मैं जो कुछ कह रहा हूं वह प्रान्तीय स्वायत्त शासन, संघीय शासन तथा जनतंत्र के विरुद्ध है। किन्तु मैं यह अनुरोध करता हूं कि हम अपना दृष्टिकोण बदलें। जिस समय हमने प्रान्तीय स्वायत्त-शासन को स्वीकार किया था उस समय हम ब्रिटिश शासन के अधीन थे। उस समय हमने अंग्रेजों को भारत से निकालने के लिये यह नारा लगाया था। हम इसे अच्छी तरह जानते थे कि अंग्रेज केन्द्र में कोई सुविधा अथवा शक्ति प्रदान करने नहीं जा रहे हैं। प्रान्त सबसे कमजोर थे किन्तु वहां भी उन्होंने पूर्ण स्वायत्त शासन प्रदान नहीं किया था। उन्होंने शक्तियां अपने ही पास सुरक्षित रखी थीं। अब समय बदल गया है। अब प्रान्तीय स्वायत्त शासन का अर्थ यह है कि केन्द्र पर विश्वास नहीं किया जाये। उस समय तो यह अविश्वास सकारण ही था क्योंकि केन्द्र में विदेशी शासन था। अब हम स्वतंत्र हो गये हैं। इसलिये अब यह कैसे सम्भव हो सकता है और कैसे उचित अथवा आवश्यक कहा जा सकता है कि प्रान्तों को शक्तियां दी जायें किन्तु एक बहुत कुछ अशक्त राज्यपाल को नियुक्त किया जाये। वह एक कठपुतली ही सिद्ध होगा। ऐसी दशा में हम राज्यपालों को रखें ही क्यों?

श्रीमान्, समाप्त करने के पूर्व मैं एक बात और कहना चाहता हूं। इसे सभी स्वीकार करते हैं कि शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धांत अब खोखला सिद्ध हो चुका है। इस सिद्धांत का सम्बन्ध केवल न्यायपालिका के विधान मंडल तथा कार्यपालिका से पृथक्करण के प्रश्न से है और यह संघीय शासन व्यवस्था पर आधृत है। इसका अर्थ यह है कि शक्तियों का पृथक्करण होना चाहिये। किन्तु जब शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धांत खोखला सिद्ध हो चुका है तो संघीय शासन का सारा ढांचा गिर पड़ता है और नष्ट हो जाता है।

मेरे विचार से 1946 से अब तक संविधान बनाने में जल्दी न दिखाकर हमें लाभ ही हुआ है। अब यह कहा जाता है कि हमें उसे जल्दी समाप्त करना चाहिये क्योंकि हम बहुत समय ले चुके हैं। संविधान बनाने में देर करके हमने कुछ ऐसी बातें तय कर दी हैं जिन्हें हम 1946 अथवा 1947 में संविधान को समाप्त करके तय नहीं कर सकते थे। एक तो राज्य संघ में समाविष्ट हो गये हैं। यदि हम 1947 में ही संविधान को स्वीकार कर लेते तो यह सम्भव न हो सकता। इस प्रकार का संविधानिक परिवर्तन करना कोई सरल कार्य नहीं है। संविधान सभा को किसी नई विधि को बनाने अथवा किसी नई विधि में परिवर्तन करने की शक्ति प्राप्त है। सरदार पटेल भारतीय राज्यों को संघ में समाविष्ट कर सके हैं, नये राज्यों का निर्माण कर सके हैं, कुछ संघांगों को समाप्त कर सके हैं और राज्यों को विभिन्न प्रान्तों में समाविष्ट कर सके हैं। इसके अतिरिक्त यदि हम संविधान को 1947 में स्वीकार कर लेते तो हमें संविधान में भारत के विभिन्न अल्पसंख्यकों के लिये जगहें रक्षित करने के उद्देश्य से उपबंध रखने पड़ते। कुछ देर करके हमने वह कार्य सम्पन्न किया है जो 1947 में असम्भव प्रतीत होता था।

श्रीमान्, मेरी यह धारणा है कि इस अध्याय को अर्थात् संविधान के भाग 6 को स्वीकार करने में हमें जल्दी न करनी चाहिये। इस समय हम भारत सरकार के अधिनियम से संतुष्ट हैं। हमें स्थित्यनुसार तथा आवश्यकतानुसार उसमें संशोधन करने की शक्ति प्राप्त है। आज माननीय डा. मुकर्जी पांच मिनट में ही इस सभा से एक विधेयक स्वीकार करा सके हैं। यदि कोई और सभा होती तो उसे स्वीकार करने में वह सम्भवत: कुछ घंटे का समय लेती। मेरी समझ में नहीं आता कि हम संविधान बनाने में इतनी जल्दी क्यों कर रहे हैं। सम्भवत: हम अन्तर्राष्ट्रीय जगत की सम्मति, अपने अंग्रेज तथा अमेरिकन मित्रों की सम्मति, पूंजीपतियों के समाचारपत्रों की सम्मति तथा ऐसे लोगों की सम्मति की ओर से ही ध्यान देते हैं जिन्हें हमारे राष्ट्र की आशाओं तथा आकांक्षाओं से कोई सहानुभूति नहीं है। मुझे आशा है कि भारत की वर्तमान स्थिति की ओर अधिक ध्यान दिया जायेगा। आज आवश्यकता इसकी है कि गरीब लोगों की आर्थिक स्थिति में तुरन्त सुधार किया जाये और निरक्षरता का अन्त किया जाये। इन कार्यों को तो हम नहीं करते हैं किन्तु लोगों पर एक नये संविधान को लादना चाहते हैं और निर्वाचनों में राष्ट्रधन को नष्ट करना चाहते हैं। श्रीमान्, मैं अनुच्छेद 129 का विरोध करता हूं।

***डा. पी.एस. देशमुख:** श्रीमान्, मेरे माननीय मित्र ने जो दृष्टिकोण अभी सभा के सामने रखा था उसका मैं समर्थन करता हूं। इस सभा के कई सदस्यों को यह विदित है कि इस उद्देश्य से मैंने एक संकल्प की सूचना दी थी। उस संकल्प में मैंने यह कहा था हमारे संविधान का आधार एक अर्धसंघीय प्रणाली न होकर एक यथोचित एकात्मक प्रणाली होनी चाहिये। मैंने इस संकल्प की सूचना इसे ध्यान में रखकर दी थी कि विश्व की वर्तमान स्थिति में यह आवश्यक है कि भारत एक सुसंगठित और सशक्त राष्ट्र हो ताकि वह विश्व-शांति बनाये रखने में प्रमुख भाग ले सके और निर्णायक कार्य कर सके। मैंने अपने संकल्प में यह भी कहा था कि किन कारणों से मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूं। कुछ लोग यह कहेंगे कि संविधान का मसौदा तैयार करते समय इस पर जोर क्यों नहीं दिया गया? सौभाग्य से अथवा दुर्भाग्य से वर्तमान सरकार से अधिक और किसी ने

[डा. पी.एस. देशमुख]

यह स्पष्ट नहीं किया है और न इस पर सोचा ही है कि संविधान की नींव कहां टेढ़ी पड़ गई है। अनुभव ने यह सिद्ध किया है कि वर्तमान संविधान को प्रयोग में लाने से भविष्य में कई संकटों का सामना करना पड़ेगा। मेरे विचार से यदि हम बहुत कुछ एक क्रांतिकारी निर्णय करके इस संविधान की नींव बदल कर इन संकटों से मुक्ति पा लें तो इससे लोगों का हितसाधन होगा। संविधान की नींव आखिर किस स्थान पर डाली गई? वह दिल्ली में नहीं डाली गई। वह भारत में किसी स्थान में नहीं डाली गई। वह इंग्लैंड में डाली गई और वास्तव में वर्तमान स्थिति से भिन्न स्थिति को दृष्टि में रखकर डाली गई। संविधान का मसौदा केवल 1935 के भारत सरकार के अधिनियम की पुनरुक्ति है। लंदन के कई गोलमेज सम्मेलनों में समवेत होकर हमने केवल मि. जिन्ना की बढ़ती हुई मांगों पृथक् निर्वाचन क्षेत्रों, रक्षणों तथा वजनों, सारे भारत में बिखरी हुई छोटी-छोटी रियासतों के प्रश्नों को ही हल करने का प्रयास किया और भारत की उस समय की राजनैतिक स्थिति को ध्यान में रखकर संविधान के एक ढांचे की कल्पना की तथा उसे एक स्वरूप प्रदान किया और उसी की हम इस समय नकल कर रहे हैं। मेरे विचार से यह संविधान और इसमें सन्निहित सिद्धांत हमारे देशवासियों की प्रकृति के अनुरूप नहीं हैं। मैं हमेशा इसके लिये अनुरोध करता रहा हूं कि हमें अपने देश के राजनैतिक प्रशासन के लिये सच्चाई के साथ एक ऐसा हल निकालना चाहिये जो हमारे देशवासियों की प्रकृति के अनुरूप हो। अब रियासतें हमारे मार्ग में बाधक नहीं हैं और न मुस्लिम लीग ही अटल बनी हुई है। इस स्थिति में हम अपने संविधान को एकात्मक स्वरूप देकर एक तर्कपूर्ण साधन को क्यों न अपनायें? ऐसा करने पर ही लोग हमारे साथ पूर्ण सहयोग करेंगे और हम उनके शारीरिक तथा बौद्धिक बल का पूर्ण उपयोग कर सकेंगे। इस संविधान की आधारभूत बातों को स्वीकार करने के अतिरिक्त यदि हम इस मार्ग का अनुसरण करें तो हम न केवल भारतीय राष्ट्र का शीघ्रातिशीघ्र निर्माण करेंगे बल्कि ऐसा करने में हमारी शक्ति भी बहुत कम नष्ट होगी।

श्रीमान्, इस प्रस्ताव में मैंने मुख्यतया इस ओर ध्यान आकृष्ट किया है कि राज्यों में, संघों में तथा प्रान्तों में मंत्रिमंडल अस्थिर रहेंगे। हम समाचारपत्रों में लगभग प्रतिदिन यह पढ़ते हैं कि विभिन्न प्रान्तों के बीच कोई न कोई कलह आदि हो रहा है और वे केन्द्र के साथ सहयोग नहीं कर रहे हैं। जब हम विधान सभा के रूप में समवेत थे तो कृषि मंत्री ने यह शिकायत की थी कि खाद्य पदार्थों के उत्पादन में प्रान्त सहयोग नहीं कर रहे हैं। शरणार्थियों के पुनर्वास के सम्बन्ध में भी इसी प्रकार की शिकायत की गई थी। प्रान्तों में कर लगाने की प्रणाली के सम्बन्ध में भी कुछ प्रश्न उठ खड़े हुए है। आज ही के समाचारपत्रों से हमें ज्ञात हुआ है कि विभिन्न प्रान्तों में कितना विक्रय कर लगाया गया है। मुझे एक विश्वस्त सूत्र से ज्ञात हुआ है कि मध्यप्रान्त के लिये जो भी चीजे जाती हैं उन पर बम्बई में विक्रय कर लगता है क्योंकि वे उस प्रान्त से होकर आती है और फिर उन पर मध्यप्रान्त में विक्रयकर लगता है। इसके अतिरिक्त श्रीमान्, हम कई आर्थिक प्रश्नों पर वाद-विवाद करने में कई दिन लगा देते हैं और तब कहीं कोई निर्णय होता है। प्रान्तों से हमारे पास ऐसे प्रस्ताव आते हैं जो एक दूसरे का खंडन करते हैं और केन्द्र से हमेशा अधिक अनुदान के लिये मांग की जाती है।

इसके अतिरिक्त हमारे सामने एक भावी प्रान्तों का प्रश्न भी है। हम जानते हैं कि इस प्रश्न के सम्बन्ध में इस समय सारे देश में उत्तेजना है। इस प्रश्न पर विचार करने के लिये हमने एक दो समितियों का निर्माण किया किन्तु स्थिति में सुधार होने के स्थान में वह और भी अधिक बिगड़ रही हैं जिससे विचारशील लोगों को दुख ही होता है। यदि हम प्रान्तों को बनाये रखना चाहते हैं तो हमें एक-भाषी प्रान्तों को स्वीकार करना ही होगा। हम कुछ कठिनाई से अथवा अपने नेताओं के प्रभाव से हम प्रश्न को थोड़े समय के लिये टाल सकते हैं परन्तु एक-भाषी प्रान्त अस्तित्व में आयेंगे ही। भले ही मेरे मित्र श्री मुंशी बम्बई को संयुक्त महाराष्ट्र में सम्मिलित न होने देना चाहें, किन्तु वे उसे सम्मिलित होने से न रोक सकेंगे। इसलिये इन सब प्रश्नों को हल करने के लिये और विशेषतया एक-भाषी प्रान्तों के वृहत् प्रश्न को हल करने के लिये, जिसके सम्बन्ध में लोग इतने अधिक उत्तेजित हैं, मेरा यह सुझाव है कि प्रान्तों को स्वायत्तशासी न रहने दिया जाये। यदि ऐसा किया गया तो सभी प्रकार के कलह और विद्वेष का अन्त हो जायेगा। प्रान्तों के अस्तित्व के कारण ही कलह भी है और विद्वेष भी, जब केवल केन्द्रीय सरकार ही रह जायेगी तो केवल एक ही विधान मंडल होगा, एक ही मंत्रिमंडल होगा और एक ही प्रकार की विधि होगी और इस कलह और विद्वेष का अन्त हो जायेगा। तब इन सभी मांगों का इस प्रकार समन्वय किया जा सकेगा कि कोई कठिनाई शेष रह सकेगी। इन सभी बातों को ध्यान में रखकर मैं इस सभा के माननीय सदस्यों से प्रार्थना करता हूं कि वे सच्चाई से इस पर विचार करें कि क्या इस देश के लिये एकात्मक शासन प्रणाली ही उपयुक्त, तर्कपूर्ण तथा व्यावहारिक शासन प्रणाली नहीं है? संघीय शासन का लोगों की संघ बनाने की इच्छा से न कि एकता स्थापित करने की इच्छा से सामंजस्य है। किन्तु भारत में लोग केवल संघ बनाना ही नहीं चाहते वे एकता चाहते हैं। जनसाधारण की यही इच्छा है। इसलिये मेरे, विचार से, यह कोई समझदारी की बात न होगी कि मेरा प्रस्ताव केवल इस कारण ठुकरा दिया जाये कि अब संविधान में आधारभूत परिवर्तन करने के लिये बहुत देर हो गई है। यदि यह सिद्धांत स्वीकार कर लिया गया तो सारा संविधान बहुत सरल हो जायेगा। और उसे दो तीन सप्ताह में ही बड़े संतोषजनक ढंग से समाप्त किया जा सकता है। यदि हम उसे इतने समय में समाप्त न भी कर सके तो भी हमारे सामने कोई कठिनाई न रहेगी क्योंकि एकात्मक शासन के अधीन सभी विषय केन्द के अधीन होंगे और इस पर विचार-विमर्श करने की आवश्यकता न रह जायेगी कि कौन से विषय समवर्त्ती होंगे, कौन से विषय प्रान्तीय होंगे और कौन से केन्द्रीय होंगे। मैं सभी सदस्यों से यह अनुरोध करता हूं कि वे इस पर विचार करें कि क्या इससे भारत का हित-साधन न होगा और क्या इससे भारत एक शक्तिशाली राष्ट्र न होगा और इस स्थिति से मुक्त न होगा कि सभी संकटों का सामना करने के उपरान्त भी वह फिर संकट ही में पड़ा रहे। हम इस प्रस्ताव को इस समय भले ही स्वीकार न करें किन्तु पन्द्रह वर्ष बाद हमें इसे स्वीकार करना ही होगा। इस सम्बन्ध में मुझे कुछ भी संदेह नहीं है। तब तक बहुत देर हो जायेगी और बहुत समय नष्ट हो जायेगा। सारे भारत में बहुत कलह और विद्वेष फैल जायेगा और भले ही फिर आप एकात्मक शासन स्वीकार करने का निश्चय करें परन्तु उसके लिये देर हो जायेगी। यदि आप इस प्रणाली को इसी समय स्वीकार कर लेते हैं तो देश निष्फल बलिदान तथा कष्ट सहन से बच जायेगा। इसलिये इस सभा

[डा. पी.एस. देशमुख]

के सभी सदस्यों से मेरा यह अनुरोध है कि वे इस प्रस्ताव पर मनन करें और इस पर विचार करें कि इसे स्वीकार करना सम्भव है या नहीं। त्रुटि के परिशोधन के लिये अभी भी समय है।

*__अध्यक्षः__ मेरा माननीय सदस्यों से यह अनुरोध है कि वे विचाराधीन अनुच्छेद पर ही मत-प्रकाश करें। मैंने डा. देशमुख को एक बड़े प्रश्न पर इसलिये मत प्रकट करने दिया कि उनकी इस सम्बन्ध में हमेशा से इस प्रकार की प्रबल धारणा रही है। मैंने उन्हें तो अपने विचार प्रकट करने का अवसर दिया किन्तु अब हम विचाराधीन अनुच्छेद पर ही अपना मत प्रकट करें।

*__श्री आर.के. सिधवाः__ मुझे इसकी प्रसन्नता है कि आपने इस प्रकार का निर्णय किया है क्योंकि मैं कई बार औचित्य प्रश्न उठाना चाहता था परन्तु फिर मैंने यह सोचा कि मैं विघ्न उपस्थित न करूं। जब हम संविधान के आधारभूत सिद्धांतों को निश्चित कर चुके हैं तो मेरे विचार से मुझसे पहले बोलने वाले दो वक्ताओं ने जो भाषण दिये वे नियम-विरुद्ध थे। यह मेरा नम्र निवेदन है। अब आपने स्थिति स्पष्ट कर दी है। अन्यथा उनके तर्कों का खंडन करने में मुझे पन्द्रह मिनट लगाने पड़ते। श्रीमान्, मैं आशा करता हूं कि अन्य सदस्यों को इस विषय के सम्बन्ध में कुछ न कहने दिया जायेगा। डा. देशमुख ने अपने प्रस्ताव पर मत प्रकट किया यद्यपि संचालन समिति ने उसे नियम-विरुद्ध घोषित कर दिया था।

श्रीमान्, श्री साहू के संशोधन में यह कहा गया है कि प्रत्येक प्रान्त को एक राज्यपाल भेजने का अवसर मिलना चाहिये। मुझे इस विचार से सहानुभूति है कि प्रत्येक प्रान्त को विभिन्न प्रान्तों में राज्यपालों को भेजने का अवसर मिलना चाहिये। यद्यपि मैं किसी प्रान्त में उसी प्रान्त का कोई निवासी राज्यपाल नियुक्त न करने की जो प्रथा इस समय अपनाई गई है उससे पूर्णतया सहमत हूं किन्तु मेरे विचार से प्रत्येक प्रान्त को, यदि वहां सुयोग्य व्यक्ति हों तो उन्हें राज्यपाल बनाकर भेजने का अधिकार होना चाहिये। इसकी उपेक्षा न होनी चाहिये और एक या दो प्रान्तों से ही राज्यपाल न चुने जाने चाहिए। यद्यपि मैं इस तर्क से पूर्णतया सहमत हूं किन्तु मेरी यह धारणा है कि इस सम्बन्ध में संविधान में संशोधन न करना चाहिये और उसे मूल रूप में रहने देना चाहिये। राज्यपालों की नियुक्ति के सम्बन्ध में यह प्रश्न फिर हमारे सामने आयेगा और तब इस पर आगे विचार हो सकता है। श्रीमान्, मैं इस धारणा से सहमत हूं कि प्रत्येक प्रान्त में ऐसे व्यक्ति हैं जो सुयोग्य शासक हो सकते हैं। इसलिये नियुक्तियां करते समय इसकी ओर ध्यान देना चाहिये कि विभिन्न प्रान्तों का विस्मरण तो नहीं किया जा रहा है। चाहे मेरी धारणा जो कुछ भी हो किन्तु मैं यह नहीं चाहता कि यह संशोधन संविधान में समाविष्ट किया जाये।

*__श्री रोहिणी कुमार चौधरी__ (आसाम : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं अपने दल के माननीय सदस्यों से तथा माननीय मुख्य प्रतोद से यह स्पष्ट शब्दों में कह देना चाहता हूं कि श्री सिधवा ने जो संशोधन उपस्थित किया है उसका मैं विरोध करता हूं।

*__अध्यक्षः__ उन्होंने कोई संशोधन उपस्थित नहीं किया है।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरीः** मुझे खेद है। मेरा मतलब श्री साहू से है। मेरे मस्तिष्क में श्री सिधवा का नाम इसलिये है कि आज उन्होंने एक बहुत ही आश्चर्यजनक बात कही है। वे यहां तक कह गये कि प्रत्येक प्रांत में सुयोग्य व्यक्ति हैं। यदि वे वास्तविकता की ओर ध्यान दें तो वे यह अनुभव करेंगे कि वे भ्रम में हैं। क्या आसाम में कोई सुयोग्य व्यक्ति है? यदि कोई सुयोग्य व्यक्ति होता तो उसे मंत्रिमंडल में अथवा राज्य-मंत्रालय में अथवा उपराज्य मंत्रालय में स्थान मिलता अथवा वह किसी प्रांत का राज्यपाल होता। यदि आसाम प्रांत में कोई सुयोग्य व्यक्ति होता तो उसे भारत के बाहर किसी दूतावास में अथवा किसी अन्य पद पर नियुक्त किया जाता। आसाम में ऐसे सुयोग्य व्यक्ति नहीं हैं। भारत में प्रख्यात न्यायाधीश हैं और उन न्यायाधीशों ने यह निश्चय किया है कि आसाम में कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं है जो राज्यपाल का कार्य कर सकता है अथवा मंत्रिमंडल में अथवा राज्य मंत्रालय में अथवा किसी दूतावास में नियुक्त हो सकता है। इसके अतिरिक्त क्या उड़ीसा में भी कोई सुयोग्य व्यक्ति है? क्या उड़ीसा के किसी भी व्यक्ति को मंत्रिमंडल में अथवा किसी दूतावास में किसी महत्त्वपूर्ण स्थान पर नियुक्त किया गया है अथवा क्या वहां का कोई व्यक्ति राज्यपाल नियुक्त किया गया है? आप इसे स्वीकार करेंगे कि आप यह नहीं कह सकते हैं कि जो लोग इन नियुक्तियों को करते हैं वे उपयुक्त तथा उत्तरदायी लोग नहीं हैं और यथोचित निर्णय नहीं करते हैं। आप यह नहीं कह सकते हैं। इसलिये मेरे माननीय मित्र श्री सिधवा का कथन बिल्कुल गलत है। हमें प्रतीक्षा करनी चाहिये। सुयोग्य व्यक्तियों को जन्म लेने देना चाहिये उन्हें सुयोग्य होने देना चाहिये और समय आने पर वे लोग इन प्रांतों में यथोचित स्थानों को प्राप्त कर लेंगे।

श्रीमान्, इसके अतिरिक्त मैं अपने माननीय मित्र श्री साहू का इस कारण विरोध करता हूं कि उनका संशोधन बिल्कुल अपरिपक्व है। यदि यह सभा अनुच्छेद 131 को स्वीकार कर लेती है अर्थात् इसे स्वीकार कर लेती है कि प्रत्येक प्रांत में राज्यपाल निर्वाचित किया जायेगा तो प्रत्येक प्रांत अपने यहां के किसी व्यक्ति को राज्यपाल बना सकता है। यदि किसी प्रांत का कोई भी व्यक्ति राज्यपाल न चुना गया तो इसके लिये वह स्वयं ही दोषी होगा। जहां तक मैं समझ सकता हूं, किसी प्रांत के किसी व्यक्ति को राज्यपाल के उच्च पद पर आसीन करने की सम्भावना इसी प्रकार हो सकती है कि उस पद के लिये निर्वाचन हो। यदि निर्वाचन किया गया तो प्रत्येक प्रांत का कोई न कोई व्यक्ति उस पद के लिये निर्वाचित हो जायेगा। अन्यथा यह किसी प्रकार भी सम्भव न हो सकेगा। मैं श्री साहू के संशोधन का इस कारण भी विरोध करता हूं कि उनका तर्क बिल्कुल गलत है क्योंकि यदि हम थोड़ी देर के लिये यह मानें कि उस पद के लिये निर्वाचन न होकर मनोनीतकरण हुआ तो उस दशा में क्या स्थिति होगी? मैं उनसे निश्चित रूप से यह कहता हूं कि यदि प्रत्येक प्रान्त के एक व्यक्ति के स्थान में आप प्रत्येक प्रान्त के तीन व्यक्तियों का सुझाव रखते हैं तो यह सम्भव न हो सकेगा। यदि मनोनीतकरण ही हुआ तो इसका अवसर न मिलेगा।

***अध्यक्षः** मैं यह बताना चाहता हूं कि इस समय सभा के सम्मुख निर्वाचन अथवा नियुक्ति का प्रश्न नहीं है। इस अनुच्छेद का विषय यह नहीं है कि राज्यपाल किस प्रकार नियुक्त किया जायेगा।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी:** मैं विनयपूर्वक यह निवेदन करना चाहता हूं कि श्री साहू का संशोधन बिल्कुल अपरिपक्व है क्योंकि यदि इस पद के लिये निर्वाचन हुआ तो साधारणतया किसी दूसरे प्रांत के व्यक्ति के आने का प्रश्न ही नहीं उठता। यदि राज्यपाल निर्वाचित हुआ तो प्रत्येक प्रांत के लोग अपने ही यहां के किसी व्यक्ति को निर्वाचित करेंगे और इसलिये यह प्रश्न नहीं उठता। श्री साहू के संशोधन का प्रसंग तभी उत्पन्न हो सकता है जब हम यह मानें कि इस पद के लिये निर्वाचन न होगा। उस स्थिति में हम यह कह सकते हैं कि राज्यपाल के पद के लिये लोगों को मनोनीत करने में इसका ध्यान रखना चाहिये कि प्रत्येक प्रांत के लोगों को इस पद के लिये अवसर मिले। इसलिये मैं श्री साहू के संशोधन का विरोध करता हूं और उसे अपरिपक्व समझता हूं।

श्रीमान्, यदि इस पद के लिये मनोनीतकरण की ही व्यवस्था की गई तो आप यह आशा नहीं कर सकते हैं कि प्रत्येक प्रांत के लोगों को इस पद पर नियुक्त होने का अवसर मिलेगा। हमें इस समय वास्तविकता की ओर ध्यान देना चाहिये। बम्बई के तीन व्यक्ति इस समय राज्यपाल हैं और यू.पी. और दिल्ली के तीन व्यक्ति राज्यपाल हैं किंतु बिहार और बंगाल जैसे महत्त्वपूर्ण प्रांतों का एक व्यक्ति भी इस समय राज्यपाल नहीं है। कुछ समय पूर्व श्रीमती सरोजिनी नायडू इस पद पर थीं और वे बंगाली थीं। इसलिये मेरा यह निवेदन है कि यदि आप केवल मनोनीतकरण की व्यवस्था करते हैं तो आपको मनोनीत करने वाले व्यक्ति पर सब कुछ छोड़ना पड़ेगा और आप यह प्रतिबंध नहीं रख सकते हैं कि प्रत्येक प्रांत का कोई न कोई व्यक्ति राज्यपाल नियुक्त किया जाये। यद्यपि मैं श्री साहू के प्रस्ताव का विरोध करता हूं किन्तु उनकी भावनाओं से मुझे सहानुभूति है और मेरे विचार से जब तक हम मनोनीतकरण संबंधी नीति को निश्चित नहीं करते हैं तब तक हमें प्रत्येक प्रांत के दावों को पूरा करना चाहिये।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान्, अब प्रस्ताव पर मत लिया जाये।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अब इस प्रस्ताव पर मत लिया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं इस संशोधन पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 129 के अन्त में निम्नलिखित जोड़ दिया जाये:

'and of whom there shall be at least one from each of the States of Part I of the First Schedule.'''

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 129 संविधान का अंग बना लिया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 129 संविधान का अंग बना लिया गया।

अनुच्छेद 130

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 2000 का उद्देश्य केवल मसौदे में शुद्धि करना है।

***प्रोफेसर के.टी. शाह:** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

''अनुच्छेद 130 के खंड (1) में 'may' शब्द के स्थान में 'shall' शब्द रखा जाये।''

संशोधित अनुच्छेद इस प्रकार हो जायेगा:

> 'The executive power of the State shall be vested in the Governor and shall be exercised by him in accordance with the Constitution and the law.' ''

मैंने जिस शब्द को प्रविष्ट करने का प्रस्ताव किया है वह बहुत आवश्यक है वह संविधान राज्यपाल के लिये यह अनिवार्य होना चाहिये कि वह संविधान और विधि के अनुसार अपनी शक्तियों को प्रयोग करे अर्थात् वह अपने मंत्रियों के परामर्श से कार्य करे। आगे के खंडों में और संविधान के अन्य भागों में इसी प्रकार के उपबंध हैं। राज्यपाल को कई शक्तियां प्राप्त हैं। राज्यपाल को केवल वही शक्तियां प्राप्त नहीं है जिनके लिये मंत्री विधान मंडल के प्रति उत्तरदायी है, किन्तु ऐसी शक्तियां भी प्राप्त हैं, जिन्हें वह स्वविवेक से प्रयोग में ला सकता है। इसलिये इस संविधान के अधीन हम जिस नवीन तथा जनतंत्रात्मक प्रणाली को प्रवर्तन में लाने जा रहे हैं उसके अन्तर्गत यह उचित ही होगा कि राज्य की कार्यपालिका का प्रमुख, संविधान तथा विधि के अनुसार, अपनी शक्तियों को प्रयोग में लाये अर्थात् ऐसी शक्तियों को प्रयोग में लाने में अथवा ऐसे कार्यों के करने में, जिनके लिये मंत्रिमंडल उत्तरदायी ठहराया जा सके, वह अपने मंत्रियों से परामर्श ले। मेरे प्रस्ताव का उद्देश्य केवल शाब्दिक परिवर्तन नहीं है किन्तु एक महत्त्वपूर्ण सैद्धांतिक परिवर्तन है और मुझे आशा है कि सभा को वह स्वीकार्य प्रतीत होगा।

***श्री मोहम्मद ताहिर** (बिहार : मुस्लिम): श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''अनुच्छेद 130 के खंड (1) में 'may' शब्द के बाद 'on behalf of the people of the State' शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

श्रीमान्, यदि यह संशोधन स्वीकार कर लिया गया तो यह अनुच्छेद इस प्रकार हो जायेगा:

> ''The executive power of the State shall be vested in the Governor and may on behalf of the people of the State be exercised by him in accordance with the Constitution and the law.''

[श्री मोहम्मद ताहिर]

इस संशोधन का उद्देश्य सरल और स्पष्ट है। मैं यह चाहता हूं कि राज्यपाल को प्रांत में किसी की ओर से शक्तियों को प्रयोग में लाना चाहिये। वह प्रांत के लोगों की ओर से ही शक्तियों को प्रयोग में लायेगा। इसलिये मेरे विचार से संविधान में इसका उल्लेख होना आवश्यक है कि राज्यपाल राज्य के लोगों की ओर से शक्तियों का प्रयोग करेगा।

इन शब्दों के साथ मैं अपना प्रस्ताव उपस्थित करता हूं।

(संशोधन संख्या 2003 उपस्थित नहीं किया गया)

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 2004। क्या उसका उद्देश्य केवल मसौदे में शुद्धि करना नहीं है?

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल : मुस्लिम): जी नहीं, श्रीमान्।

***अध्यक्ष:** यदि आप उसे सारभूत समझते हैं तो आप उसे उपस्थित कर सकते हैं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> ''अनुच्छेद 130 के खंड (2) के उपखंड (ए) में 'transfer to the Governor any functions conferred by any existing law on' शब्दों के स्थान में 'authorise or empower the Governor to exercise any power or perform any functions which by any exitsing law are exercisable or performable by' शब्द रखे जायें।''

श्रीमान्, संदर्भ में ये शब्द हैं:

> ''इस अनुच्छेद की किसी बात से–
>
> (क) यह न समझा जायेगा कि राज्यपाल को वर्तमान विधि अथवा किसी अन्य अधिकारी द्वारा प्रदत्त कोई प्रकार्य हस्तांतरित किये जा रहे हैं।''

मेरी आपत्ति 'राज्यपाल को कोई प्रकार्य हस्तांतरित किये जा रहे हैं' शब्दों के संबंध में है, मेरा यह निवेदन है कि प्रकार्यों का कुछ पदों के साथ स्थायी संबंध होता है और उन्हें कभी भी हस्तांतरित नहीं किया जा सकता है। केवल कुछ अन्य लोगों को किसी विशेष पद के प्रकार्यों तथा शक्तियों को प्रयोग में लाने का अधिकार दिया जा सकता है। मुरे की अंग्रेजी के आक्सफोर्ड के कोष में 'प्रकार्य' की यह परिभाषा की गई है–''किसी प्रकार का कार्य जो कोई पदधारी करे''। मेरे विचार से प्रकार्य उन शक्तियों का एक भाग है जो कोई पदधारी प्रयोग में लाये। इसलिये मैंने यह सुझाव रखने का प्रयास किया है कि इस अनुच्छेद की किसी बात से किसी राज्यपाल को किसी ऐसी शक्ति को प्रयोग में लाने का अथवा प्रकार्य को करने का अधिकार प्राप्त न होगा जो वर्तमान विधि के अधीन अन्य प्राधिकारियों द्वारा प्रयोग में आती हो अथवा किया जाता हो। ''प्रकार्य हस्तान्तरित किये जा रहे हैं'' शब्द अनुपयुक्त होंगे। मैं यह नहीं कहता हूं

कि इस संशोधन का उद्देश्य मसौदे में शुद्धि करना नहीं है। उससे मसौदे की भी शृद्धि होती है। किन्तु मेरे विचार से 'प्रकार्यों' के प्रसंग में 'हस्तांतरित' शब्द का प्रयोग उपयुक्त नहीं है और इसीलिये मैंने सभा का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया है।

(संशोधन संख्या 2005 उपस्थित नहीं किया गया।)

*__माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:__ श्रीमान्, यह अनुच्छेद 42वें अनुच्छेद के समान ही है, जो संघ की कार्यपालिका शक्ति के बारे में है। यह अक्षरश: अनुच्छेद 42 के समान ही है। संशोधनों की पुस्तक में मुझे यह दिखाई देता है कि अनुच्छेद 42 के संबंध में भी बिल्कुल इसी प्रकार के संशोधन उपस्थित किये गये थे और उन पर विस्तृत रूप से विचार-विमर्श अधिक हुआ था। अनुच्छेद 42 तथा तद्विषयक संशोधनों के संबंध में मैंने जो कुछ कहा था उससे अधिक और कुछ कहने से कुछ लाभ न होगा। इसलिये मेरा यह निवेदन है कि सभा में जितने भी संशोधन उपस्थित किये गये हैं उनमें से किसी को भी स्वीकार करने के लिये मैं तैयार नहीं हूं।

*__श्री नजीरुद्दीन अहमद:__ श्रीमान्, अनुच्छेद 42 अन्य प्रसंग में आया है।

*__अध्यक्ष:__ प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 130 के खंड (1) में 'may' शब्द के स्थान में 'shall' शब्द रखा जाये।

संशोधन गिर गया।

*__अध्यक्ष:__ प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 130 के खंड (1) में 'may' शब्द के बाद 'on behalf of the people of the State' शब्द प्रविष्ट किये जायें।''

संशोधन गिर गया।

*__अध्यक्ष:__ प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 130 के खंड (2) के उपखंड (ए) में 'transfer to the Governor any functions confereed by any existing law on' शब्दों के स्थान में 'authorise or empower the Governor to exercise any power or perform any functions which by any existing law are exercisable or performable by' शब्द रखे जायें।''

संशोधन गिर गया।

*__अध्यक्ष:__ प्रस्ताव यह है कि:

''अनुच्छेद 130 संविधान का अंग बना लिया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 130 संविधान का अंग बना लिया गया।

अनुच्छेद 131

***अध्यक्षः** इस अनुच्छेद के संबंध में माननीय सदस्य इस ओर ध्यान देंगे कि मसौदा-समिति ने दो विकल्पों का सुझाव दिया है। संशोधन इन विकल्पों में से एक न एक विकल्प के संबंध में है। इसलिये मेरे विचार से सबसे अच्छा तरीका यह होगा कि एक विकल्प के संबंध में किसी संशोधन पर विचार कर लिया जाये और यदि वह स्वीकार कर लिया गया तो अन्य विकल्प के संबंध में सभी संशोधन स्वतः गिर जायेंगे। हम संशोधन संख्या 2006 को उठाते हैं और यदि वह स्वीकार कर लिया गया तो हम दूसरा संशोधन उठायेंगे।

***माननीय श्री घनश्यामसिंह गुप्त** (मध्यप्रांत और बरार : जनरल): श्रीमान्, मेरा सुझाव यह है। संशोधनों को उठाया जा सकता है परन्तु पहले हमें इस संबंध में निर्णय कर लेना चाहिये कि हम पहले विकल्प को स्वीकार करते हैं या दूसरे विकल्प को ताकि यदि हम पहले विकल्प को स्वीकार करते हैं तो उसके संबंध में संशोधन उपस्थित किये गये हैं उन्हीं पर विचार किया जाये और अन्य संशोधनों पर विचार न किया जाये।

***अध्यक्षः** मैंने यही सुझाव रखा था परन्तु यह विचार किया गया कि अच्छा यही होगा कि संशोधनों को उठाया जाये।

***माननीय श्री घनश्यामसिंह गुप्त** यदि हम दूसरे विकल्प को लेते हैं और फिर संशोधनों को उठाते हैं तो पहले विकल्प पर विचार ही न हो सकेगा।

***अध्यक्षः** यदि संशोधन संख्या 2006 स्वीकार कर लिया गया तो दूसरे विकल्प के संबंध में सभी संशोधन गिर जायेंगे।

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारतीः** (मद्रास : जनरल): एक तीसरा विकल्प भी है।

***अध्यक्षः** उसे किसी विकल्प के संबंध में संशोधन के रूप में उपस्थित किया जा सकता है।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** श्रीमान्, मैं आपके ध्यान में संशोधन संख्या 2015 लाना चाहता हूं, जो मेरे नाम से है।

***अध्यक्षः** मैं उसे उठाऊंगा। उसे स्वतंत्र रूप से उठाया जायेगा। पहले हम संशोधन संख्या 2006 पर विचार करेंगे। श्री गौतम।

***एक माननीय सदस्यः** नियुक्तियों के प्रश्न का क्या होगा?

***अध्यक्षः** हम इस समय निर्वाचन संबंधी प्रश्न को उठा रहे हैं। उसके बाद हम नियुक्तियों के प्रश्न को उठायेंगे। पहले हम निर्वाचन-संबंधी प्रश्न पर विचार कर लेना चाहते हैं?

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारतीः** दोनों को अस्वीकार किया जा सकता है।

***अध्यक्ष:** दूसरे विकल्प के संबंध में संशोधन है।

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारती:** यदि राष्ट्रपति द्वारा नियुक्तियों के संबंध में संशोधन स्वीकार कर लिये गये तो अन्य सभी संशोधन गिर जायेंगे।

***अध्यक्ष:** प्रश्न केवल यह है कि संशोधनों पर किस क्रम से विचार किया जाये। मैं पहले निर्वाचनों के प्रश्न को निबटा देना चाहता हूं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** यह प्रस्तावक पर छोड़ देना चाहिये कि किस विकल्प पर विचार किया जाये। डा. अम्बेडकर यह बतायें कि वे किस विकल्प को उपस्थित करना चाहते हैं। साधारणतया किसी विशेष अनुच्छेद को उपस्थित किया जाना चाहिये। मसौदा-समिति के सभापति पर यह छोड़ देना चाहिये कि वह जिस प्रस्ताव को चाहें उपस्थित करें। यदि आप उन्हें इसकी आज्ञा दे दें तो प्रश्न हल हो जायेगा। वे किसी एक विकल्प को उपस्थित कर सकते हैं। यह बाद को एक साधारण प्रथा हो जायेगी। इसलिये मेरे विचार से सबसे अच्छा यह होगा कि इसका निर्णय प्रस्तावक महोदय पर छोड़ दिया जाये। यदि आप डा. अम्बेडकर को प्रस्तावक मानते हैं तो उनसे किसी एक विकल्प को उपस्थित करने के लिये कहा जाये।

***अध्यक्ष:** क्या डा. अम्बेडकर किसी एक विकल्प को स्वीकार करने के लिये तैयार हैं?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं इस संबंध में कुछ कहना चाहता हूं कि कौन सी प्रक्रिया स्वीकार की जाये। इसमें कोई संदेह नहीं कि इस समय अनुच्छेद 131 विकल्प के रूप में है दोनों विकल्पों में एक बात समान है और वह यह है कि दोनों में राज्यपाल के निर्वाचन का सुझाव है। निर्वाचन का प्रकार इस समय एक आनुसंगिक प्रश्न है। इसके विपरीत तीन-चार संशोधनों में एक ऐसा सिद्धांत सन्निहित है जो अनुच्छेद 131 के मसौदे के दो विकल्पों में सन्निहित सिद्धांतों के विरुद्ध है अर्थात् उनमें यह सुझाव रखा गया है कि राज्यपाल मनोनीत होना चाहिये। यदि राज्यपाल के मनोनीतकरण-संबंधी संशोधन को सभा स्वीकार करती है तो दोनों विकल्प गिर जाते हैं और उन पर विचार करने की आवश्यकता नहीं रह जाती। इसलिये मेरा यह सुझाव है कि उचित यह होगा कि पहले श्री गुप्ते के संशोधन संख्या 2010 को उठाया जाये और फिर श्री कामत के संशोधन को और उसके बाद संशोधन संख्या 2015 को उठाया जाये। यदि यह विषय पहले उठाया जाता है और सभा यह निर्णय कर लेती है कि राष्ट्रपति द्वारा नियुक्ति का सिद्धांत स्वीकार कर लिया जाये तो अनुच्छेद 131 के किसी विकल्प पर विचार करने से कोई लाभ न होगा। यह मेरा सुझाव है किन्तु यह आपके निर्णय के अधीन है।

***अध्यक्ष:** कई संशोधन इस संबंध में हैं कि राज्यपाल का निर्वाचन हो अथवा राष्ट्रपति द्वारा उसकी नियुक्ति हो। अन्य संशोधन निर्वाचन प्रणाली के संबंध में हैं। पहले में निर्वाचन के प्रश्न को हल कर लेना चाहता हूं ताकि निर्वाचन-प्रणाली के संबंध में जो संशोधन हैं वे भी निबटा दिये जायें। तब हम नियुक्ति के प्रश्न को उठायेंगे और नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा ही की जायेगी।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** (मद्रास : जनरल): यदि नियुक्ति के प्रश्न को पहले उठाया जा रहा है तो निर्वाचन के प्रश्न का स्वत: निराकरण हो जायेगा। मैं इस विषय पर डा. अम्बेडकर के विचारों से सहमत हूं।

***अध्यक्ष:** इस पर अवश्य ही वाद-विवाद होगा, क्योंकि इस संबंध में मतभेद दिखाई देता है। इसलिये हम श्री गुप्ते के दूसरे विकल्प को उठायेंगे। इसमें भी उन्होंने परामर्श के लिये स्थान रखा है। मेरे विचार से हमें पहले संशोधन संख्या 2015 को उठाना चाहिये।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्यप्रांत और बरार : जनरल): मेरा यह निवेदन है कि संशोधन संख्या 2011 का भी सार वही है।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 2007 का भी सार वही है। इनमें से कोई एक उपस्थित किया जा सकता है और फिर हम शब्दावलि के संबंध में निर्णय कर लेंगे। संशोधन संख्या 2006 को हम छोड़ रहे हैं। संशोधन संख्या 2007 उसी के समान है। संशोधन संख्या 2015 उपस्थित किया जा सकता है।

***श्री के.एम. मुन्शी:** (बम्बई : जनरल): संशोधन संख्या 2015 अधिक पूर्ण है।

***श्री एच.वी. कामत:** मेरे संशोधन का क्या होगा?

***अध्यक्ष:** वह उतना पूर्ण नहीं है जितना संशोधन संख्या 2015 है।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

''अनुच्छेद 131 के स्थान पर निम्नलिखित रखा जाये:

'131. The Governor of a State shall be appointed by the President by warrant under his hand and seal.'

इस संशोधन का, जो इस सभा के पांच छ: सदस्यों के नाम से है, सबसे बड़ा गुण यह है कि इस अनुच्छेद में अथवा मसौदा-समिति द्वारा प्रस्तावित विकल्पों में जिस प्रक्रिया को निर्धारित किया गया है उससे इस संशोधन में सरल प्रक्रिया का सुझाव है।

श्रीमान्, मेरी यह धारणा है कि भारत की एकता की दृष्टि से तथा केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन देने की दृष्टि से यह आवश्यक है कि प्रांतों पर भारत सरकार के प्राधिकार को अक्षुण बनाये रखा जाये। इस कथन का कि राष्ट्रपति एक नामावली से लोगों को चुनकर मनोनीत कर सकता है वास्तव में यह अर्थ है कि राष्ट्रपति का मनोनीतकरण का अधिकार सीमित हो जाता है। इससे विधान के हाथ में शक्ति चली जाती है। श्रीमान्, यह आवश्यक है कि राष्ट्रपति पर विधान मंडल का कोई प्रभाव न पड़े। राज्यपाल पद के लिये मेरे विचार से उसी प्रांत से अथवा अन्य किसी प्रांत से कोई व्यक्ति नियुक्त किया जा सकता है। मेरी अपनी धारणा यह है कि किसी प्रांत में वहीं का कोई निवासी

राज्यपाल नियुक्त न किया जाये, क्योंकि इससे विघटनशील प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन मिलता है। इसलिये मैं यह कहना चाहता हूं कि राष्ट्रपति का मनोनीतकरण का अधिकार सीमाबद्ध न होना चाहिये। श्रीमान्, इससे अधिक मुझे और कुछ नहीं कहना है। यह एक सीधा-सादा प्रस्ताव है और मैं सभा से यह सिफारिश करता हूं कि यह स्वीकार कर लिया जाये।

*__अध्यक्षः__ निर्वाचन के संबंध में अन्य संशोधन भी हैं। मैं उन्हें उपस्थित करने को कहूंगा और फिर हम सामान्य वादानुवाद कर सकते हैं। एक संशोधन मि. नजीरुद्दीन अहमद के नाम से है और दूसरा श्री मिहिरलाल चट्टोपाध्याय के नाम से। पहला विकल्प श्री गुप्ते के नाम से है और संशोधन संख्या 2013 पंडित लक्ष्मीकांत मैत्र और अन्य लोगों के नाम से है। अन्य भी कई संशोधन निर्वाचन विषयक हैं। इसलिये मैं उनमें से एक को उठाऊंगा। मेरे विचार से संशोधन संख्या 2013 इन सबसे अधिक विस्तृत है। किन्तु हम किसे उठायें? जो लोग निर्वाचन के पक्ष में हैं वे इनमें से एक को चुन सकते हैं और मैं उसे उपस्थित करने की आज्ञा दे दूंगा। जो लोग निर्वाचन के पक्ष में हैं वे निर्वाचन संबंधी किसी संशोधन को चुन सकते हैं।

*__श्री मोहम्मद ताहिरः__ मेरा संशोधन, अर्थात् संशोधन संख्या 2019 भी है।

*__अध्यक्षः__ उसका आशय भिन्न है और वह निर्वाचन के प्रश्न के बाद आयेगा। इस समय हम निर्वाचन-संबंधी प्रश्न पर विचार कर रहे हैं।

*__पं. लक्ष्मीकांत मैत्र__ (पश्चिमी बंगाल : जनरल): श्रीमान्, संशोधन संख्या 2013 सबसे अधिक विस्तृत है किन्तु मेरे दल ने मुझे उसे उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दी है।

*__माननीय श्री घनश्यामसिंह गुप्तः__ यदि आप उपस्थित किये हुये संशोधन पर मत लें तो सारी समस्या हल हो जायेगी। यदि वह स्वीकार कर लिया गया तो फिर अन्य किसी संशोधन को उपस्थित करने को कोई आवश्यकता न रह जायेगी। अब वादानुवाद हो सकता है।

*__अध्यक्षः__ मैं यह मान लेता हूं कि कोई अन्य संशोधन उपस्थित नहीं किया जा रहा है।

*__माननीय श्री घनश्यामसिंह गुप्तः__ यदि यह संशोधन गिर जाता है तो अन्य संशोधनों को उपस्थित करना होगा।

*__अध्यक्षः__ तो हम पहले इस संशोधन पर विचार कर लें। मैं यह देखता हूं कि इस संबंध में अधिक मतभेद नहीं है और इसलिये मैं आशा करता हूं कि अधिक वादानुवाद न होगा।

*__श्री एच.वी. कामतः__ अध्यक्ष महोदय, मेरे माननीय मित्र श्री ब्रजेश्वर प्रसाद ने सभा के सम्मुख अभी जो संशोधन अर्थात् संशोधन संख्या 2015, उपस्थित किया है उसका

[श्री एच.वी कामत]

समर्थन करने के लिये मैं उठा हूं। मैंने जिस संशोधन की सूचना दी थी उसका सार, अर्थात् संशोधन संख्या 2015 का सार, भी वही है। केवल इसमें इस संशोधन की वैधानिक तथा संवैधानिक वाक्यावली का अभाव है। इस प्रस्ताव के सार के संबंध में बोलने के पूर्व मैं एक बात, एक साधारण बात की ओर आपका ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूं।

*__श्री मोहम्मद ताहिरः__ श्रीमान्, मुझे एक औचित्य प्रश्न करना है। संविधान के मसौदे पर पहले एक समय जब वादानुवाद हो रहा था तो उस अवसर पर सभा ने एकमत से यह स्वीकार किया था कि राज्यपाल का निर्वाचन होगा। इसलिये मैं यह जानना चाहता हूं कि क्या किसी सदस्य को सभा के इस निर्णय के विरुद्ध कोई संशोधन उपस्थित करने की आज्ञा मिल सकती है? इस सभा ने मुख्य सिद्धांत पर विचार-विमर्श किया और एक निर्णय किया। यह दूसरा विकल्प मसौदा समिति की ही रचना है। इसलिये क्या किसी सदस्य को कोई ऐसा संशोधन उपस्थित करने की आज्ञा मिल सकती है जो राज्यपाल के निर्वाचन के विरुद्ध हो?

*__अध्यक्षः__ इस सभा को इसकी स्वतंत्रता है कि वह अपने निर्णयों को बदल दे। इसे पूर्व निर्णय में परिवर्तन करके उपस्थित किया गया है। सभा को इसकी स्वतंत्रता है कि वह इसे अस्वीकार कर दे। इसलिये औचित्य-प्रश्न का कोई प्रसंग नहीं है।

*__श्री एच.वी. कामतः__ इस संशोधन में आये हुए 'of a state' शब्द बहुत कुछ अनावश्यक हैं। यदि हम राष्ट्रपति विषयक अध्याय को देखें तो हम उसमें एक स्थान पर राष्ट्रपति का उल्लेख पायेंगे और राष्ट्रपति के निर्वाचन-विषयक अनुवर्त्ती अनुच्छेद में 'of India' शब्दों का उल्लेख न पायेंगे। इस उदाहरण को देखकर मैंने यह विचार किया कि संक्षिप्त विवरण की दृष्टि से ''of India' शब्दों को निकाला जा सकता है। किन्तु मैं इस पर जोर नहीं देता हूं और इस सभा के सम्मुख उपस्थित इस संशोधन का समर्थन करता हूं, जिसका सार मेरे संशोधन के समान ही है।

मेरे मित्र मि. ताहिर ने एक आपत्ति की थी और वह यह था कि इस सभा ने पहले एक अवसर पर राज्यपाल को चुनने की एक अन्य प्रणाली के संबंध में निर्णय किया था। यह सच है। इस सभा के अगस्त के अधिवेशन में इस सभा ने इस आशय का एक अनुच्छेद स्वीकार किया था—मैं समितियों के प्रतिवेदनों की दूसरी माला से पढ़कर सुना रहा हूं–कि प्रत्येक प्रांत के लिये एक राज्यपाल होगा और यह प्रौढ़ मताधिकार के आधार पर लोगों द्वारा प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित होगा। किन्तु श्रीमान्, आपने ठीक ही कहा है कि यह एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न सभा है और अपने निर्णयों को बदल सकती है। अगस्त 1947 में जब यह अनुच्छेद स्वीकार किया गया था तब से स्थिति बदल गई है और मेरे विचार से इसके लिये यथेष्ट कारण है कि सभा अपने निर्णयों में परिवर्तन करे। सभा को यह स्मरण होगा कि 1947 के जुलाई-अगस्त के अधिवेशन में जिस योजना की रूपरेखा निश्चित की थी वह बहुत कुछ एक संघीय योजना थी...

*__श्री लक्ष्मीनारायण साहूः__ श्रीमान्, मुझे एक औचित्य-प्रश्न करना है। प्रक्रिया संबंधी नियमों के नियम 32 में कहा गया है कि: ''कोई ऐसा प्रश्न जिसके संबंध में सभा निर्णय

कर चुकी हो तब तक फिर से उपस्थित न किया जायेगा जब तक कि एक-चौथाई उपस्थित तथा मत देने वाले सदस्य इसके लिये सहमत न हों।''

***अध्यक्षः** मैंने यह मान लिया है कि उपस्थित सदस्यों में से एक-चौथाई से अधिक इसके पक्ष में हैं। यदि आप चाहते हैं तो मैं इसकी पुष्टि करा सकता हूं मेरे विचार से एक-चौथाई से अधिक सदस्य इसके पक्ष में हैं।

***श्री विश्वनाथ दासः** श्रीमान्, क्या आप इसे केवल माने ले रहे हैं या आपने वास्तव में सभा का मत ले लिया है?

***अध्यक्षः** मैंने सभा का मत तो नहीं लिया है किन्तु मैं जानता हूं कि वह इसी प्रकार है। यदि आप चाहते हैं तो मैं सभी मत ले सकता हूं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** निर्णय सुनाया जा चुका है। क्या अब कोई सदस्य महोदय उस पर आपत्ति कर सकते हैं?

श्री एच.वी. कामतः सभा को स्मरण होगा कि 1947 के अगस्त के अधिवेशन में हमने कार्यपालिका के संबंध में कुछ अनुच्छेद स्वीकार किये थे, जिनमें कई स्थलों पर भारतीय राज्य को संधान कहा गया है। किन्तु इस समय हम जिस संविधान के मसौदे पर विचार कर रहे हैं उसमें से यह शब्द मेरे विचार से कुछ सारपूर्ण कारणों के आधार पर जानबूझकर निकाल दिया गया है। अनुच्छेद 1 में, जिसे हमने इस सभा के पिछले अधिवेशन में स्वीकार किया था, यह कहा गया है कि भारत राज्यों का एक संघ होगा। इसलिये हमारे राज्य के संघीय अंग पर न कि संधानीय अंग पर अधिक जोर दिया गया है। मेरे मित्र डा. देशमुख एक घंटे पूर्व अपने उस प्रस्ताव पर बोले थे जो भारत के लिये एक सशक्त एकात्मक शासन-प्रणाली के पक्ष में है। हमारे देश की वर्तमान स्थिति को देखते हुए उनके प्रस्ताव के पक्ष में बहुत कुछ कहा जा सकता है। किंतु, श्रीमान्, इस संबंध में एक बात की ओर ध्यान देना चाहिये और वह यह है कि आज हम जिस संविधान को बना रहे हैं वह केवल संक्राति काल के लिये नहीं है बल्कि कई दशाब्दियों तक के लिये है जबकि हमारी स्थिति ईश्वर की कृपा से सुस्थिर हो जायेगी और हम पुनर्निर्माण के कार्य में लग जायेंगे। प्रान्तों में हमारे लोग स्वायत्त शासन के आदी हो गये हैं। पिछले दस वर्षों से अथवा इससे अधिक समय से उन्होंने उसका अनुभव किया है और, मेरे विचार से, यह बुद्धिमत्ता की बात न होगी कि हम अब स्वायत्त शासन प्रणाली का शून्यन कर दें अथवा उसका न्यूनन करें। देश की सुस्थिर अवस्था तथा शक्ति को देखते हुए हमारे लिये तो यह आवश्यक है कि हम प्रत्येक प्रांत के लोगों को अधिकाधिक अधिकार प्रदान करें। परन्तु, श्रीमान्, इस सम्बन्ध में आधारभूत बात यह है कि हम इन प्रांतों के लिये अथवा नये संविधान के अनुसार राज्यों के लिये, जो प्रशासन अथवा शासन की इकाइयां होंगी, किस प्रकार की सरकार निर्धारित करने जा रहे हैं अथवा उसका सुझाव करने जा रहे हैं? यदि संविधान का यह लक्ष्य है कि प्रत्येक राज्य में संसदात्मक अथवा मंत्रिमंडल मूलक सरकार हो तो यह स्पष्ट है कि प्रत्यक्ष निर्वाचन की प्रणाली अनुचित और अग्राह्य है। इसे सभी स्वीकार करते हैं कि किसी प्रांत में अथवा देश में सफल मंत्रिमंडल मूलक

[श्री एच.वी. कामत]

सरकार का एक लक्षण यह भी है कि एक निरपेक्ष संविधानिक प्रमुख हो जो संविधानिक प्रतीक हो। यदि राज्यपाल प्रांत के सभी मतदाताओं के मत से प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित किया जाये तो संभावना इसकी होगी कि वह किसी दल का व्यक्ति होगा और उसकी कुछ प्रबल धारणायें होंगी। चूंकि वह प्रांत के सभी प्रौढ़ मतदाताओं द्वारा निर्वाचित होगा इसलिये वह यह समझेगा कि वह अन्य व्यक्तियों की अपेक्षा श्रेष्ठ है और राज्य के मुख्यमंत्री से कहीं अधिक शक्तिशाली है क्योंकि मुख्यमंत्री केवल एक निर्वाचन क्षेत्र से निर्वाचित होगा और बहुसंख्यक दल का नेता होने के कारण राज्यपाल द्वारा मनोनीत होगा। इस प्रकार राज्य में दो परस्पर विरोधी प्राधिकारी हो जायेंगे। इनमें से एक मुख्यमंत्री होगा जिसे हमने विचाराधीन संविधान के अधीन राज्य के संबंध में कार्यपालन का प्राधिकार प्रदान किया है। दूसरा व्यक्ति राज्यपाल होगा, जिसे संविधान द्वारा बहुत अधिक शक्तियां अथवा प्रकार्यता प्रदान नहीं किये गये हैं किंतु वह बहुत सी शक्तियां प्राप्त कर लेगा क्योंकि वह यह कहेगा कि मुझे तो सारे प्रांत के लोगों ने निर्वाचित किया है, इसलिये मैं लोगों के प्रति उत्तरदायी हूं न कि मुख्यमंत्री के प्रति। इसलिये प्रांत के प्रशासन में प्रत्येक कदम पर और यदि प्रत्येक कदम पर नहीं तो प्राय: निर्वाचित राज्यपाल और निर्वाचित मुख्यमंत्री के बीच कलह होगा। इसलिये मेरे विचार से हमने प्रांतीय राज्यपाल के संबंध में निर्वाचन प्रणाली को समाप्त करके समझदारी का ही काम किया है।

प्रांत अथवा राज्य के राज्यपाल के संबंध में किसी नामावली से चुनने की प्रणाली पर भी बहुत सी आपत्तियां की जा सकती है। थोड़ी देर के लिये हम यह मानें कि किसी राज्य का विधान मंडल राष्ट्रपति के पास चार या पांच नामों की एक नामावली भेजता है और राष्ट्रपति अपने दृष्टिकोण अथवा धारणा के अनुसार, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति अपनी धारणा के अनुसार ही कार्य करता है, पहले नाम को न चुनकर दूसरे, तीसरे, चौथे अथवा किसी अन्य नाम को चुनेगा तो क्या होगा? राज्य का विधान मंडल अवश्य ही राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत व्यक्ति से रुष्ट रहेगा क्योंकि वह पहले व्यक्ति की अपेक्षा होने से मनोनीत होगा। इसलिये नामावली से किसी व्यक्ति के नियुक्त होने से मंत्रियों के अथवा राज्य के विधान मंडल के, नवीन राज्यपाल से बहुत अच्छे संबंध न रहेंगे।

इस संबंध में एक विचारणीय बात और भी है। निर्वाचन में हमेशा ही, चाहे वह छोटे निर्वाचन क्षेत्र में हो या बड़े निर्वाचन क्षेत्र में, कई दल अथवा समूह शक्ति प्राप्त करने के लिये एक-दूसरे से संघर्ष करते रहते हैं। किसी विधान मंडल में किसी सुगठित दल के होने पर भी संभावना इसकी है कि यह विदित होने पर कि राज्यपाल की नियुक्ति के लिये राष्ट्रपति के पास नामावली भेजी जा रही है, उस दल में भी समूह बन जायेंगे और प्रत्येक समूह अपने आदमी का समर्थन करेगा। इस प्रकार नामावली प्रणाली के अधीन निर्वाचन होते समय जो दलबन्दी की भावना उत्पन्न होगी तथा जो उत्तेजना फैलेगी वह आने वाले वर्षों में भी उसी प्रकार बनी रहेगी और प्रांत में कोई दल अथवा मंत्रिमंडल सुचारू रूप से कार्य न कर सकेगा और न मंत्रिमंडल और लोगों के बीच ही सद्भावना होगी।

श्रीमान्, इसलिये मेरा यह निवेदन है कि नियुक्ति की तुलना से निर्वाचन के पक्ष में और विपक्ष में सभी बातों की ओर ध्यान देने से यह प्रतीत होता है कि नियुक्ति ही श्रेयस्कर है। ''मनोनीतकरण'' शब्द मुझे बिल्कुल पसन्द नहीं है। मेरे विचार से इस प्रसंग में यह शब्द बहुत ही अनुपयुक्त है क्योंकि वास्तव में राष्ट्रपति मनोनीत नहीं करेगा बल्कि नियुक्त करेगा। इस आशय का एक संशोधन भी था परन्तु मुझे यह दिखाई देता है कि वह उपस्थित नहीं किया गया है मैंने उसे अभी देखा है।

अन्त में मैं यह कहना चाहता हूं कि मेरे मित्र श्री ब्रजेश्वर प्रसाद के संशोधन का यद्यपि मैं समर्थन कर रहा हूं किन्तु उसके विरुद्ध यह तर्क उपस्थित किया जा सकता है कि राज्यपाल केवल एक प्रतीक के रूप में प्रमुख नहीं है। आलोचक, अनुच्छेद 188 और 187 की ओर संकेत कर सकते हैं क्योंकि उनके अधीन राज्यपाल को आपात की गंभीर स्थिति के लिये शक्तियां तथा अध्यादेश प्रवर्त्तन में लाने का अधिकार प्रदान किया गया है। अनुच्छेद 188 में यह देखा जा सकता है कि ये असाधारण शक्तियां राज्यपाल को अधिक से अधिक दो सप्ताह के लिये प्रदान की गई हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि चौबीस घंटे में भी आश्चर्यजनक बातें अथवा अत्याचार किये जा सकते हैं। परन्तु सभा इस ओर ध्यान देगी कि राज्यपाल के लिये यह आवश्यक है कि वह जो कोई भी कार्य करे उसकी सूचना राष्ट्रपति को दे। इसलिये वास्तव में आपात की स्थिति उत्पन्न होने पर राज्यपाल शीघ्र ही अपने उत्तरदायित्व से मुक्त हो जाता है और सारी शक्ति राष्ट्रपति के हाथ में चली जाती है। इस स्थिति में सारे देश का शासन संविधान के भाग 11 के 275 से लेकर 278 तक के अनुच्छेदों के अनुसार होगा।

अध्यादेश बनाने की शक्ति मुझे पसन्द नहीं है और राष्ट्रपति की इस शक्ति के संबंध में मैंने कुछ संशोधन उपस्थित किये थे। किंतु राष्ट्रपति की आध्यादेश बनाने की शक्ति को सीमित करने के उद्देश्य से उपस्थित मेरे इन संशोधनों के विरुद्ध डा. अम्बेडकर ने अपना तर्क हमारे सामने रखा था। उन्होंने यह कहा था कि यह कोई असाधारण बात नहीं है कि राष्ट्रपति को ऐसे समय के लिये यह शक्ति दी जा रही है जबकि संसद सत्रस्थ न होगी और यदि स्थिति यह होगी कि संसद बराबर, लगभग सारे वर्ष, सत्रस्थ होगी तो उन्होंने सभा को यह आश्वासन दिया कि राष्ट्रपति को अध्यादेश बनाने की आवश्यकता ही न पड़ेगी। मुझे आशा है कि वही तर्क इस प्रसंग में भी स्थिर होगा। इसको दृष्टि में रखते हुए कि राज्यों में तथा केन्द्र में भी विधि-निर्माण का बहुत कार्य होगा, मुझे विश्वास है कि राज्यों के विधान-मंडल तथा केन्द्र में संसद बराबर सत्रस्थ होंगे और जैसा कि डा. अम्बेडकर ने कहा है, राज्यपाल को राज्यों में तथा राष्ट्रपति को केन्द्र से किसी अध्यादेश को प्रवर्त्तन में लाने की आवश्यकता ही न पड़ेगी। इसलिये मेरा यह निवेदन है कि सभी बातों को ध्यान में रखते हुए और इसे भी ध्यान में रखते हुए कि कोई प्रणाली दोषमुक्त नहीं है और संपूर्ण संविधान पर विचार करते हुए तथा राज्यों के विधान-मंडलों तथा राज्यों से मन्त्रिमंडलों को दी हुई शक्तियों तथा केन्द्र और राज्यों के पारस्परिक संबंधों पर विचार करते हुए, मेरी समझ से सबसे कम दोष विभिन्न राज्यों के राज्यपालों को राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त करने की प्रणाली में है। इसलिये मैं इस संशोधन का समर्थन करता हूं और सभा से सिफारिश करता हूं कि यह स्वीकार कर लिया जाये।

श्री बी.ए. मांडलोई (मध्यप्रांत और बरार : जनरल): श्रीमान्, यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं अपना संशोधन संख्या 2007 उपस्थित करना चाहता हूं। वह अधिक विस्तृत है क्योंकि उसमें पहला विकल्प भी सन्निहित है।

अध्यक्षः संशोधन संख्या 2007 का आशय वही है जो संशोधन संख्या 2015 का है और वह अभी उपस्थित किया जा चुका है।

श्री बी.ए. मांडलोईः परन्तु दूसरा भाग उपस्थित नहीं किया गया है। मेरा संशोधन दोनों विकल्पों के संबंध में है। उसमें पहला विकल्प निकाल देने का प्रस्ताव किया गया है और दूसरे विकल्प में कुछ परिवर्तन करने का सुझाव है।

***अध्यक्षः** यदि दूसरा विकल्प स्वीकार कर लिया जाता है तो पहला विकल्प स्वतः गिर जाता है।

सरदार हुकम सिंह (पूर्वी पंजाब : सिक्ख): श्रीमान्, जो संशोधन उपस्थित किया गया है उसका मैं विरोध करता हूं। मेरे विचार से हम में से वे लोग जिन्होंने संशोधनों की सूचना दी है एक संकटापन्न स्थिति में पड़ गये हैं क्योंकि सभा इस प्रश्न पर, बिना हमको सुने हुए और बिना हमारे संशोधनों पर हमारे कथन पर विचार किये हुए, निर्णय करने जा रही है। मेरे नाम से भी एक संशोधन, अर्थात् संशोधन संख्या 2006 है। मेरे मतानुसार दूसरा विकल्प ही सर्वोत्तम है। वह मध्यम मार्ग का अनुसरण करता है। उसमें एक व्यवस्था राज्य के राज्यपाल के निर्वाचन की है। मैं अपने माननीय मित्र श्री कामत के इस विचार से सहमत हूं कि प्रायः निर्वाचन करना बहुत व्यसाध्य तथा कष्टसाध्य होगा। इसके अतिरिक्त राज्यपाल तथा मुख्यमंत्री के बीच कलह की सम्भावना भी बनी रहेगी। साथ ही मेरा यह भी विचार है कि राज्यपाल को स्वविवेक से प्रयोग में लाने के लिये इतनी शक्ति न दी जानी चाहिये। जब उसे एक ही दल के परामर्श से उसे प्रयोग में लाना होगा तो उसका दुरुपयोग भी हो सकता है। पक्षपात भी हो सकता है। मेरे विचार से प्रस्तावित दूसरे विकल्प से इस प्रकार का पक्षपात अवरुद्ध हो सकता है। यदि राज्य का विधान मंडल एक नामावली प्रस्तुत करेगा तो उस दशा में भी निःसंदेह शासनारूढ़ दल को, अथवा राज्यपाल को, अन्तिम शक्ति प्राप्त होगी और जिसे भी वे पसन्द करेंगे उसे चुनेंगे। नामावली में उल्लिखित लोगों की योग्यता जनसाधारण परख सकेंगे और यदि उपयुक्त व्यक्ति न चुना गया तो वे चुनाव की कम से कम आलोचना तो कर ही सकेंगे। इससे पक्षपात अथवा शक्ति का दुरुपयोग रुक सकता है। इसलिये मेरे विचार से शुद्ध निर्वाचन और शुद्ध मनोनीतकरण की परस्पर दो प्रणालियों में से दूसरा विकल्प उत्कृष्ट है। इस कारण मैं प्रस्तुत प्रस्ताव का विरोध करता हूं।

श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यरः श्रीमान्, लगभग दो वर्ष पूर्व जो निर्णय किया गया था उसे दृष्टि में रखते हुए तथा इसे भी दृष्टि में रखते हुए, सभी बातों को ध्यान में रखकर मुझे विश्वास है कि सबसे अच्छा यही होगा कि हम श्री ब्रजेश्वर प्रसाद के संशोधन को स्वीकार कर लें। मैं इस संशोधन का समर्थन करने के उद्देश्य से कुछ शब्द

कहना चाहता हूं। इस प्रश्न पर विचार करते समय हमें मुख्यतः यह स्मरण रखना चाहिये कि इस सभा ने यह सिद्धांत स्वीकार किया है कि विभिन्न राज्यों में उत्तरदायी शासन स्थापित किया जाये, यह कि राज्यपाल प्रांत का केवल संविधानिक प्रमुख है और यह कि विभिन्न राज्यों में अवर सदन के प्रांत उत्तरदायी मंत्रिमंडल को ही कार्यपालन संबंधी वास्तविक शक्ति प्रदान की गई है। सभा को इस प्रश्न पर विचार करना है कि इस स्थिति में क्या यह उचित होगा कि सार्वभौम मताधिकार पर आधृत एक बहुव्ययी तथा वृहत् निर्वाचन-तंत्र को स्वीकार किया जाये। इस सभा में प्रस्तुत विभिन्न प्रस्तावों पर अर्थात् (1) सार्वभौम मताधिकार के आधार पर राज्यपाल के चुनाव, (2) अनुपाती प्रतिनिधित्व के अथवा अन्य किसी सिद्धांत के आधार पर अवर सदन अथवा दोनों सदनों के बहुमत से राज्यपाल के निर्वाचन, (3) राज्य के अवर सदन द्वारा एक नामावली प्रस्तुत करने तथा राष्ट्रपति द्वारा उसमें से किसी के चुने जाने, और (4) मंत्रिमंडल के परामर्श से राष्ट्रपति द्वारा चुने जाने के प्रस्तावों पर पूर्ण रूप से विचार करने के उपरांत मैंने यह अनुभव किया कि बुद्धिमत्ता इसी में होगी कि हम अन्तिम प्रस्ताव को स्वीकार करें। यदि कोई राज्यपाल संविधानिक प्रमुख के रूप में अपने कृत्यों का यथेष्ट निर्वहन कर रहा है तो संविधान के अधीन उसे जो शक्तियां प्रदान की गई है उनकी तुलना में निर्वाचन के लिये उसे जो धन व्यय करना पड़ेगा वह बहुत अधिक होगा। संभावना इसकी भी होगी कि जनसाधारण द्वारा निर्वाचित राज्यपाल का विधान मंडल के प्रति उत्तरदायी तथा सार्वभौम मताधिकार के आधार पर निर्वाचित मुख्यमंत्री तथा मंत्रिमंडल से कलह हो जाये। इसके अतिरिक्त आधुनिक काल की दशाओं को दृष्टि में रखते हुए निर्वाचन भी किसी दल का पड़ता लेकर लड़ा जायेगा। वास्तव में निर्वाचनों में भी प्रत्येक दल को किसी नेता का आश्रय लेना पड़ता है, जिसके संबंध में यह आशा की जाती है कि वह भविष्य में प्रांत का मुख्यमंत्री होगा। क्या राज्यपाल का आश्रय लेना चाहिये अथवा मुख्यमंत्री का? सरकार के प्रतिदिन के कार्य में भी यह संभावना बनी रहती है कि मंत्रियों की राज्यपाल से कलह हो जाये। किन्तु हम जिस भित्ति पर अपने संविधानिक ढांचे का निर्माण कर रहे हैं वह विधान मंडल तथा कार्यपालिका के बीच तथा कार्यपालिका और सरकार के प्रतीक रूप प्रमुख के बीच सामंजस्यपूर्ण संबंधों पर आधृत है। संयुक्त राज्य अमरीका के किसी राज्य के गवर्नर तथा हमारे संविधान में कल्पित राज्यपाल में कोई समानता नहीं है। संयुक्त राज्य के संविधान के अधीन किसी राज्य के गवर्नर को वास्तविक तथा सारपूर्ण शक्ति प्राप्त होती है। संयुक्त राज्य में कार्यपालिका तथा विधान मंडल को स्पष्ट रूप से पृथक किया गया है। यथेष्ट उदाहरण कनाडा के संविधान में मिल सकता है जिसमें उत्तरदायी गवर्नर की व्यवस्था है। कनाडा में प्रत्येक प्रांत का लेफ्टीनेंट गवर्नर, गवर्नर जनरल द्वारा अर्थात् मंत्रिमंडल की प्रमंत्रणा से गवर्नर जनरल द्वारा नियुक्त होता है। कनाडा के संविधान के तथा हमारे संविधान के कई अंगों में समानता है और हमारे संविधान को कुछ आलोचकों ने अर्थ-संधानीय तक कहा है। मुख्यतः हमने उपनिवेशों अथवा राष्ट्रमंडल के विभिन्न भागों में प्रचलित उत्तरदायी शासन के सिद्धांत को स्वीकार किया है। जहां कहीं भी उत्तरदायी शासन, संविधान का आधारभूत सिद्धांत है वहां कहीं भी राज्यपाल के निर्वाचन की व्यवस्था नहीं है।

[श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

मुझे इसमें कुछ भी संदेह नहीं है कि अब संविधान व्यवहार में आने लगेगा तो यह प्रथा बन जायेगी कि राज्यपाल के निर्वाचन के संबंध में भारत सरकार प्रांतीय मंत्रिमंडल से परामर्श लेगी। यदि यह राष्ट्रपति और उसके मंत्रिमंडल पर छोड़ दिया जायेगा तो, जहां तक समझ में आता है, राष्ट्रपति प्रांत की स्थिति पर विचार करते हुए एक ऐसे व्यक्ति को चुनेगा जिसकी योग्यता के बारे में कोई संदेह न होगा, जिसका सामाजिक जीवन में एक सुप्रतिष्ठित स्थान होगा और जिसका प्रांत की दल बन्दिओं तथा कलह से कोई संबंध न रहा होगा। संभावना इसी की है कि ऐसा व्यक्ति मंत्रिमंडल का मित्र होगा और उसकी ओर से मध्यस्थल का काम करेगा तथा आरम्भ में मंत्रिमंडलमूलक शासन के सामंजस्यपूर्ण संचालन में सहायक होगा। मुख्य बात जो स्मरण रखने योग्य है, यह है कि राज्यपाल एक संविधानिक प्रमुख तथा मंत्रिमंडल का चतुर परामर्शदाता होगा और हर प्रकार के संकट को समाप्त करने में समर्थ होगा। यदि राज्यपाल की यह स्थिति होगी तो सम्भावना इसी की है कि भारत सरकार द्वारा संभवत: प्रांतीय सरकार की सहमति से चुना हुआ राज्यपाल, अपने कृत्यों को उस व्यक्ति से कहीं अच्छी तरह निभायेगा जो किसी दल का सहारा लेकर प्रौढ़ मताधिकार के आधार पर सारे प्रांत द्वारा चुना जायेगा अथवा निर्वाचन के किसी सिद्धांत के आधार पर विधान मंडल द्वारा चुना जायेगा।

एक बात मैं यह कह देना चाहता हूं। इस वादानुवाद में यह बात कही गई है कि क्या यह एक बुद्धिमत्ता की बात है कि प्रधानमंत्री को अथवा प्रधानमंत्री के परामर्श से कार्य करने वाले संघ के राष्ट्रपति को इतनी अधिक शक्ति दी जाये। यदि आप सभी सेनाओं के मुख्य सेनानायक की नियुक्ति के संबंध में संसार में विभिन्न भागों में भेजे जाने वाले राजदूतों की नियुक्ति के संबंध में, उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति तथा न्यायाधीशों की तथा उच्च पदाधिकारियों की नियुक्ति के संबंध में विधान मंडल के प्रति उत्तरदायी मंत्रिमंडल अथवा सिद्धांतत: राष्ट्रपति का विश्वास कर सकते हैं तो मैं इसमें कोई हानि नहीं देखता हूं कि राष्ट्रपति ही राज्यपाल की नियुक्ति करे क्योंकि अवश्य ही प्रधानमंत्री और मंत्रिमंडल के परामर्श से कार्य करना होगा। प्रांतीय मंत्रिमंडल से परामर्श लेने की प्रथा आसानी से स्थापित हो सकती है। सभा को यह विदित होगा कि कनाडा में गवर्नरों की नियुक्ति के संबंध में इस प्रकार की प्रथा स्थापित हो चुकी है। यद्यपि आस्ट्रेलिया का संविधान भिन्न प्रकार का है किन्तु वहां भी इसी प्रकार की प्रथा स्थापित हो चुकी है और प्रत्येक राज्य का गवर्नर प्रांतीय मंत्रिमंडल की परामर्श से नियुक्त किया जाता है।

मेरे विचार से मुझे नामावली के संबंध में भी कुछ शब्द कहने चाहियें क्योंकि मैं मसौदा समिति का एक सदस्य हूं और उस समिति ने यह अनुभव किया है कि सभा के पहले के निर्णय के अनुसार निर्वाचन प्रणाली को स्वीकार करने में कठिनाई होगी। मसौदा समिति ने विचारार्थ एक अन्य सुझाव उपस्थित किया था। सभी बातों पर विचार करने के उपरांत मुझे यह विश्वास हो गया है कि नामावली प्रणाली को स्वीकार करने से बहुत संकट का सामना करना पड़ेगा क्योंकि विभिन्न विश्वविद्यालयों में वाइस-चांसलरों

के निर्वाचनों से यही अनुभव हुआ है। यदि कोई प्रांतीय विधान मंडल तीन या चार व्यक्तियों को निर्वाचित करेगा तो राष्ट्रपति क्या करेगा? क्या वह उस व्यक्ति को लेने के लिये सहमत हो जायेगा। जिसने सबसे अधिक मत प्राप्त किये हों अथवा इसकी उपेक्षा करके किसी ऐसे व्यक्ति को चुनेगा कि जिसे कम मत प्राप्त हुए हों? साधारणतया उसे उस व्यक्ति का समर्थन करना चाहिये जिसने सबसे अधिक मत प्राप्त किये हों। यदि वह इसकी उपेक्षा करेगा और अन्य तीन व्यक्तियों में से किसी को चुनेगा तो प्रांत और केन्द्र के बीच कलह होगी और यह कलह बनी रहेगी। यह एक और कठिनाई होगी। इसलिये यदि राष्ट्रपति उस प्रांत में सामंजस्यपूर्ण संबंध बनाये रखना चाहेगा तो उसे उसी व्यक्ति की नियुक्ति का समर्थन करना होगा जिसने प्रांतीय विधान-मंडल में सबसे अधिक मत प्राप्त किये हों। इसका यही परिणाम होगा। सभा को एक अन्य बात पर भी विचार करना चाहिये। अपने संविधान में हमें प्रत्येक ऐसी प्रणाली को प्रविष्ट करने का प्रयास करना चाहिये जिससे केन्द्रों और प्रांतों के बीच सामंजस्यपूर्ण संबंध स्थापित हो सकें। यदि आप किसी ऐसे व्यक्ति को नियुक्त करते हैं जो प्रांत अथवा राज्य द्वारा तो निर्वाचित न हों किन्तु प्रांतीय मंत्रिमंडल की सहमति से संघ के राष्ट्रपति द्वारा चुना गया हो तो आप केन्द्र और प्रांत के बीच घनिष्ठ संबंध स्थापित कर सकेंगे और उनके बीच कलह की संभावना मिट जायेगी, जो अन्यथा बनी रहेगी।

एक बात और भी है। यह कहा गया है कि राज्यपाल को अवसर आने पर असाधारण शक्तियों का प्रयोग करना पड़ेगा। इससे मनोनीतकरण की, न कि निर्वाचन की, अधिक पुष्टि होती है। यदि सार्वभौम मताधिकार के आधार पर निर्वाचित व्यक्ति प्रांतीय मंत्रिमंडल से कलह करे और अपने को प्रांतीय मंत्रिमंडल से ऊंचा समझे तो संविधानिक संकट उपस्थित होने की संभावना बढ़ जायेंगी। ऐसी स्थिति भी उत्पन्न हो सकती है कि राज्यपाल का हस्तक्षेप आवश्यक हो जाये किन्तु असाधारण अवसरों पर ही इसकी आवश्यकता पड़ेगी। इस प्रकार के हस्तक्षेप के संबंध में भी प्रांतीय मंत्रिमंडल की सहमति से राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त व्यक्ति लोक निर्वाचित व्यक्ति की अपेक्षा सम्भवतः अधिक सावधानी से कदम बढ़ायेगा। सभी बातों को ध्यान में रखते हुए, सामंजस्य के हित में, सुचारू रूप से कार्य-संचालन के हित में और प्रांतीय मंत्रिमंडल तथा राज्यपाल के बीच सद्भावपूर्ण संबंध स्थापित करने के हित में, अच्छा यही होगा कि हम कनाडा के संविधान का अनुसरण करें और राज्यपालों को राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त करने की व्यवस्था करें और इस प्रथा को स्थापित होने दें कि केन्द्रीय मंत्रिमंडल का पथ प्रदर्शन प्रांतीय मंत्रिमंडल के परामर्श से भी होगा। इन शब्दों के साथ मैं श्री ब्रजेश्वर प्रसाद के संशोधन का सहर्ष समर्थन करता हूं।

डा. पी.एस. देशमुखः अध्यक्ष महोदय, मेरे विचार से यह एक ऐसा अनुच्छेद है जिस पर हमें अन्य साधारण अनुच्छेदों की अपेक्षा अधिक विस्तृत रूप से विचार-विमर्श करना चाहिये क्योंकि हम राज्य के राज्यपाल पद की परिभाषा को ही बदलने जा रहे हैं। यह ठीक है कि चूंकि हमने प्रौढ़ मताधिकार की तथा निर्वाचित राज्यपाल की व्यवस्था की है इसलिये इस देश के असंख्य लोग इसकी बाट जोह रहे हैं कि वे एक ऐसे व्यक्ति के चुनाव में मत देंगे जो उनके प्रान्त का भाग्य विधाता होगा। जैसा कि मैं पहले कह चुका हूं, मैं प्रांतों को उनके वर्तमान रूप में बनाये रखने के पक्ष में नहीं हूं। राज्यपालों की नियुक्ति के संबंध में भी हमें कुछ आधारभूत बातों पर विचार करना है। यदि हम यह

[डा. पी.एस. देशमुख]

निर्णय करते हैं कि राज्यपाल प्रौढ़ मताधिकार के आधार पर प्रांतों द्वारा चुना जायेगा तो तर्कसंगत बात यही है कि वह सच्चे अर्थ में कार्यपालिका का प्रधिकारी हो। इसके विपरीत यदि आप उसे प्रतीक रूप में प्रमुख बनाना चाहते हैं और उसकी वही स्थिति बनाये रखना चाहते हैं, जो उसे 1935 ई. के अधिनियम के अधीन प्राप्त है और जो उसे संविधान के मसौदे के अधीन प्राप्त है तो इसके अतिरिक्त और कोई चारा नहीं है कि राष्ट्रपति उसे नियुक्त करे। इस प्रश्न पर बहुत मतभेद है। कुछ लोगों का यह मत है कि यदि भारत के लोगों से यह कहने के बाद कि राज्यपाल निर्वाचित होंगे हम अपना वचन भंग कर देते हैं और राष्ट्रपति द्वारा उनकी नियुक्ति की व्यवस्था करते हैं तो हम उनके प्रति विश्वासघात करते हैं। इसलिये, श्रीमान्, मैं यह चाहता हूं कि भारत के लोग यह समझें कि हम क्या करने जा रहे हैं और क्यों ऐसा कर रहे हैं? इसलिये मैं यह चाहता हूं कि राज्यपालों को नियुक्त करने के पक्ष में जितने भी तर्क हों वे इस सभा में बता दिये जायें ताकि राष्ट्र को यह विश्वास हो जाये कि जो निर्णय हम करने जा रहे हैं वह ठीक निर्णय है। चूंकि प्रांत बने रहेंगे और संविधान का ढांचा भी यही रहेगा, इसलिये मेरे विचार से हमारे इस कदम से, यद्यपि हम यह कदम देर करके उठा रहे हैं, एक त्रुटि दूर हो जायेगी जो अन्यथा बनी रहती। हमारा सारा संविधान 1935 ई. के अधिनियम पर आधृत है और वह अधिनियम उत्तरदायी शासन के सिद्धांतों पर आधृत है। उत्तरदायी शासन केन्द्र में ही नहीं है बल्कि प्रांतों में भी है। जहां कहीं भी उत्तरदायी शासन हो वहां के लिये यह आवश्यक है कि लोगों के प्रतिनिधियों को किसी दिन और किसी समय कार्यपालिका में परिवर्त्तन करने का अधिकार प्राप्त हो। इसलिये प्रशासन का प्रमुख एक ऐसा व्यक्ति होना चाहिये जो प्रतिदिन के प्रशासन में हस्तक्षेप न करे। इस दशा में यह आवश्यक है कि यदि आप निर्वाचित राज्यपालों की भी व्यवस्था करते हैं तो उन्हें प्रतीक रूप में प्रमुख होना होगा और उन्हें प्रतिदिन के प्रशासन में हस्तक्षेप करने का अधिकार प्राप्त न होना चाहिये। इसलिये यह उचित न होगा कि लोगों से केवल नाम मात्र के प्रमुख को निर्वाचित करने के लिये एक वृहत् निर्वाचन में भाग लेने के लिये कहा जाये। मुझे विश्वास है कि इस संशोधन में जो निर्णय सन्निहित है वह ठीक निर्णय है क्योंकि राज्यपाल केवल प्रतीक रूप में प्रमुख होगा। वह एक संविधानिक प्रमुख होगा और उसे प्रशासन में हस्तक्षेप करने का अधिकार प्राप्त न होगा। कभी यह भी कहा जाता है कि हम लोगों को मतदान के अधिकार से वंचित कर रहे हैं। मेरे विचार से यह बात नहीं है क्योंकि लोगों को समय-समय पर प्रांतीय सभाओं के लिये प्रौढ़ मताधिकार के आधार पर अपने प्रतिनिधियों को चुनने का अवसर मिलेगा। इन प्रतिनिधियों का बहुसंख्यक दल प्रांतीय मंत्रिमंडल की रचना करेगा और प्रांत का शासन करेगा तथा संविधान द्वारा प्रदत्त सभी शक्तियों को प्रयोग में लायेगा।

राष्ट्रपति द्वारा राज्यपालों की नियुक्ति के संबंध में यह भी आपत्ति की जाती है कि हम राष्ट्रपति तथा प्रधानमंत्री को अत्यधिक अधिकार दे रहे हैं। हमारे देश में, जो संसार के सबसे बड़े देशों में से एक है, हमें लोक-निर्वाचित व्यक्ति को, चाहे हम इसे पसंद करें या न करें, बहुत सी शक्तियां देनी होंगी। आखिर भारत का प्रधानमंत्री लोकप्रिय प्रधानमंत्री ही होगा। वह उसी समय तक पदासीन रह सकेगा जब तक वह लोक निर्वाचित संसद का विश्वास भाजन होगा। इसलिये प्रधानमंत्री को अथवा राष्ट्रपति को नियुक्ति की शक्ति

प्रदान करने में किसी प्रकार का संकोच नहीं होना चाहिये। आखिर लोक-प्रतिनिधि तो उन से पूछताछ कर ही सकते हैं। इसलिये, श्रीमान्, मैं एक क्षण के लिये भी यह तर्क स्वीकार करने के लिये तैयार नहीं हूं कि प्रधानमंत्री को नियुक्ति का बहुत अधिक अधिकार हो जायेगा। वह उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को नियुक्त करेगा। वह राजदूतों को तथा राज्यपालों आदि को नियुक्त करेगा और इस प्रकार वह दिल्ली में शासन करने वाला एक प्रकार का मुगल सम्राट हो जायेगा। मेरे विचार से यह भय निराधार है कि प्रधानमंत्री को नियुक्ति की अत्यधिक शक्ति दी जा रही है।

*__एक माननीय सदस्यः__ क्या आप यह माने ले रहे हैं कि आलोचना होगी?

*__डा. पी.एस. देशमुखः__ जी हां। मैं अवश्य यह माने ले रहा हूं कि आलोचना होगी और वह होगी ही क्योंकि हम एक ऐसा कदम उठा रहे हैं जिससे वह सिद्धांत ही बदल जाता है, जिसके लिये हम सहमत हो चुके हैं। इसलिये मुझे इसका अधिकार है कि मैं यह समझूं कि आलोचना होगी और यह भी कहूं कि विपक्षी क्या कह सकते हैं?

इसके अतिरिक्त, श्रीमान्, हमें इस पर भी विचार करना है। यदि हम प्रौढ़ मताधिकार के आधार पर राज्यपाल को निर्वाचित करें तो उसके तथा प्रांतीय मुख्यमंत्री के बीच संभवतः कभी भी सामंजस्यपूर्ण संबंध नहीं रह सकते और यह यदा कदा ही होगा कि उसका मुख्यमंत्री से पूर्णतया मतैक्य होगा। चूंकि हमने प्रांतीय सरकारों को बहुत कुछ स्वायत्तता प्रदान की है इसलिये, श्रीमान्, यह कल्पना से परे नहीं है कि कोई प्रांत केन्द्र की पूर्णतया उपेक्षा करने लगे। हमें इस पूरे प्रश्न पर विचार करना चाहिये और केवल इस दृष्टि से विचार न करना चाहिये कि प्रांत के दो महत्त्वपूर्ण व्यक्ति हमेशा सुचारू रूप से कार्य कर सकेंगे या नहीं बल्कि इस दृष्टि से भी विचार करना चाहिये कि इसका परिणाम क्या होगा? यदि उनके बीच प्रत्येक प्रश्न के संबंध में मतैक्य रहता है, उदाहरणार्थ यदि वे केन्द्र की पूर्णतया उपेक्षा करने के लिये सहमत हो जाते हैं तो क्या स्थिति होगी और केन्द्र किस स्थिति में पड़ जायेगा। यदि कोई प्रांत केन्द्र के सुझावों अथवा आदेशों को न मानें तो क्या केन्द्र उस प्रांत पर आक्रमण कर देगा? सीमित शक्ति प्राप्त निर्वाचित राज्यपाल की व्यवस्था तो अनुपयुक्त है ही किन्तु साथ ही निर्वाचित राज्यपाल की हमेशा यह धारणा रहेगी कि वह प्रांत में सबसे अधिक लोकप्रिय व्यक्ति है और लोगों का विश्वास भाजन है और इसलिये प्राधिकार को प्रयोग में लाने के लिये सबसे अधिक सक्षम है। इसलिये उसके तथा मुख्यमंत्री के बीच अवश्य ही कलह होगा। यदि कलह न भी हुआ और पूर्ण मतैक्य रहा तो यदि ये दो सज्जन केन्द्र की उपेक्षा करने लगेंगे तो कैसी स्थिति उत्पन्न हो जायेगी इस विषय पर भी गंभीरता से विचार करने की आवश्यकता है। इसलिये, श्रीमान्, मेरे विचार से, जब तक प्रांत बने रहते हैं और हमारे संविधान के ढांचे में कोई परिवर्तन नहीं किया जाता है तब तक स्थिति में भी कोई परिवर्तन नहीं हो सकता है और बुद्धिमत्ता इसी में है कि राष्ट्रपति को नियुक्ति की शक्ति प्रदान की जाये। श्रीमान्, मैं यह चाहता हूं कि किसी अवसर पर नियुक्ति राष्ट्रपति के प्रसाद पर्यन्त ही रहे। केवल निर्वाचित राज्यपाल के संबंध में ही यह तर्कयुक्त था कि हम महाभियोग संबंधी उपबंध को स्थान देते। यदि यह संशोधन स्वीकार कर लिया जाता है तो यह सब बातें निकल जायेंगी। इसलिये मेरी यह इच्छा है कि राज्यपाल की नियुक्ति राष्ट्रपति के प्रसादपर्यन्त ही रहे।

माननीय श्री बी.जी. खेर (बम्बई : जनरल): अध्यक्ष महोदय, चूंकि यह सभा अपने निर्णय को दुहराना चाहती है जो उसने इस विषय में दो वर्ष पूर्व किया था, मैं यह समझता हूं कि मुझे इस संशोधन में सन्निहित सिद्धांत के संबंध में कुछ शब्द कहने चाहियें। मैं उसका सच्चे हृदय से समर्थन करना चाहता हूं। पहली बात यह है कि जब हमने यह निर्णय किया था तब से देश की स्थिति बदल गई है और भले ही हमने इस निर्णय को उस समय ठीक समझा हो किन्तु अन्य विषयों के संबंध में हमने इस निर्णय का उल्लंघन किया ही है। अनुभव से भी यह ज्ञात हुआ है कि जो प्रणाली हमने स्वीकार की है वह व्यवहार में सफल रही है। श्रीमान्, प्रश्न यह है। जब हमने अनुच्छेद 129 को स्वीकार करके यह निर्णय कर लिया है कि हम प्रांतों में राज्यपाल रखेंगे ही तो क्या हमें निर्वाचित राज्यपालों को रखना चाहिये? अथवा क्या वह राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत अथवा नियुक्त होना चाहिये? इस वादानुवाद में प्रौढ़ मताधिकार के आधार पर निर्वाचन करने का समर्थन किसी ने नहीं किया है क्योंकि इसमें अत्यधिक व्यय तो होगा ही, साथ ही प्रांत का प्रमुख एक ऐसा व्यक्ति हो जायेगा जो राज्य के सभी लोगों द्वारा निर्वाचित होगा। किन्तु हमने जिस उत्तरदायी शासन के सिद्धांत को स्वीकार किया है उसके अनुसार संविधान के अधीन राज्य की संपूर्ण शक्ति मुख्यमंत्री को प्राप्त होगी। इससे अवश्य कुछ कलह होगा जिसे प्रशासन के सुसंचालन के हित में न होने देना चाहिये। आखिर हमने राज्यपाल की व्यवस्था क्यों की है? क्योंकि, श्रीमान्, वह राज्य का प्रतिनिधित्व करेगा। मुख्यमंत्री सभा के बहुसंख्यक दल का नेता होने के कारण पदारूढ़ रहेगा और वह प्रशासन के प्रत्येक कार्य के उत्तरदायी ठहराया जायेगा। जहां तक राज्यपाल का संबंध है, हमने उसे बहुत कम शक्तियां प्रदान की हैं। किन्तु मैं इस विचार से सहमत नहीं हूं कि वह केवल नाममात्र का प्रमुख है। नाममात्र का प्रभुत्व न कोई अच्छा कार्य कर सकता है और न कोई बुरा कार्य। श्रीमान्, सभा से मेरा यह निवेदन है कि यदि राज्यपाल अच्छा आदमी हो तो वह बहुत से अच्छे कार्य कर सकता है और यदि वह बुरा आदमी हो तो बहुत से बुरे कार्य कर सकता है, भले ही जिस संविधान को हम बना रहे हैं उसके अधीन उसे बहुत कम शक्ति दी गई है। उसे जो शक्तियां और प्रकार्य प्रदान करने जा रहे हैं वे बहुत कम हैं उदाहरणार्थ वह विधान सभा का आह्वान करेगा तथा उसे विघटित करेगा, राज्य की विधानसभा द्वारा स्वीकृत विधेयकों के लिये अनुमति देगा, राज्य के प्रतिनिधियों के रूप में कार्य करेगा, सामान्य निर्वाचन अथवा मंत्रिमंडल के पदत्याग के उपरांत मुख्यमंत्री को नियुक्त करेगा, रस्मी अवसरों पर प्रांत का प्रतिनिधित्व करेगा और आपात की दशा में ऐसी शक्तियों का प्रयोग करेगा जो हम उसे प्रदान करेंगे। वह राज्य का प्रतीक होगा। व्यवहार में हमने यह देखा है कि यदि कोई राज्यपाल कार्यशील व्यक्ति हो और सज्जन हो तो वह पदारूढ़ दल के विपक्षियों के सम्पर्क में आकर कई आयोजनों के संबंध में उनकी सहमति प्राप्त कर सकता है और साधारणतया दौरे करके अथवा अन्य प्रकार से प्रशासन को सामंजस्यपूर्ण बना सकता है। किन्तु साथ ही वह बहुत शरारत भी कर सकता है। इसलिये मेरा यह विचार है कि यह एक गलत कदम होगा कि हम राज्यपाल को अधिक विस्तृत मताधिकार के आधार पर निर्वाचित करें और प्रांत के शिखर पर एक ऐसे व्यक्ति को रखें जिसे मुख्यमंत्री से अधिक प्रतिनिधित्व प्राप्त हो। इसलिये यदि सभी लोगों द्वारा मताधिकार के

आधार पर निर्वाचन करने की प्रणाली पर विचार न किया जाये तो सरदार हुक्मसिंह ने जिस दूसरे विकल्प की ओर संकेत किया है उस पर, अर्थात् सभा द्वारा निर्वाचित लोगों की नामावली के प्रश्न पर, विचार किया जाये। श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर के तर्कपूर्ण भाषण के उपरांत जिसमें उन्होंने इस प्रणाली के दोष बताये हैं, मुझे केवल इतना कहना है कि यदि सभा में भी निर्वाचन होगा तो कुछ प्रचार और दलबंदी होगी ही और चाहे जो कोई व्यक्ति नियुक्त हो, सभा के दो चार व्यक्ति रुष्ट हो ही जायेंगे। यह उपयुक्त बात न होगी।

इसलिये, श्रीमान्, इस प्रणाली को स्वीकार करने से जो कलह होगा उसे यदि हम न होने देना चाहें तो हमें इस नियुक्ति के संबंध में किस सिद्धांत का अनुसरण करना चाहिये? हमारा पथप्रदर्शक यही सिद्धांत होना चाहिये कि कार्यपालिका का कोई सदस्य लोकमत से निर्वाचित न हो। लोग यह कह सकते हैं कि हम विक्टोरिया के मध्यकाल के उदाहरणों का अनुसरण कर रहे हैं किन्तु मिल की लिखी हुई 'रिप्रजेंटेटिव गवर्नमेंट' नामी पुस्तक में मैंने इस महत्त्वपूर्ण सिद्धांत का उल्लेख पायाः

''लोकप्रिय संविधान के अधीन सुशासन का सबसे महत्त्वपूर्ण सिद्धांत यह है कि कार्यपालिका का कोई कर्मी लोक निर्वाचन के आधार पर कभी भी नियुक्त न किया जाना चाहिये। वह लोकमत के आधार पर अथवा लोकप्रतिनिधियों के मत के आधार पर कभी भी नियुक्त न किया जाना चाहिये।''

श्रीमान्, मेरा निवेदन है कि यह एक बहुत सुन्दर सिद्धांत है। आप प्रांत में एक दल के नेता को उत्तरदायी ठहराना चाहते हैं, आप भारत के प्रधानमंत्री को उत्तरदायी ठहराना चाहते हैं। उसे लोगों को नियुक्त करने की शक्ति प्राप्त होनी चाहिये चाहे वे केन्द्रीय मंत्रिमंडल में उसके सहकारी हों अथवा राज्यपाल हों। चाहे राज्यपाल को आप प्रांत में सीमित शक्ति दें या अधिक शक्ति दें किन्तु चूंकि वह प्रांत में कार्यपालिका का प्रतीक रूप में प्रमुख होगा, इसलिये उस प्रधानमंत्री का विश्वास भाजन होना चाहिये। इन लोगों को निर्वाचन के आधार पर नियुक्त करने का सिद्धांत बहुत ही सन्देहात्मक है। अमेरिका में जो कुछ किया जाता है उस पर मैं अपने विचार नहीं प्रकट करना चाहता। किन्तु चूंकि हमने उत्तरदायी शासन की इंग्लैंड की प्रणाली को स्वीकार किया है और राज्यपाल को एक स्थान प्रदान करने का निर्णय किया है, इसलिये, श्रीमान्, मेरा यह निवेदन है कि प्रांतों में सामंजस्यपूर्ण शासन बनाये रखने के लिये यह आवश्यक है कि देश का राष्ट्रपति किसी ऐसे व्यक्ति को प्रांत का राज्यपाल नियुक्त करे जो उसका विश्वास भाजन हो, जिसका अवश्य ही यह अर्थ है कि वह उसके मंत्रिमंडल का तथा प्रांत के मंत्रिमंडल का विश्वास भाजन होगा। किसी अन्य प्रणाली के फलस्वरूप, चाहे वह प्रौढ़ मताधिकार के आधार पर निर्वाचन करने की प्रणाली हो अथवा विधानसभा के लोक प्रतिनिधियों द्वारा निर्वाचन करने की प्रणाली हो, अवश्य ही बहुत संघर्ष होगा। इसलिये मेरा यह निवेदन है कि श्री ब्रजेश्वर प्रसाद ने जो संशोधन उपस्थित किया है वह स्वीकार कर लिया जाये।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी:** अध्यक्ष महोदय, हमारे लिये यह कहना बहुत कठिन है कि क्या ठीक है और क्या ठीक नहीं है। दो वर्ष पूर्व, जून के महीने में, प्रांतीय संविधान समिति में तीन या चार दिन तक इस प्रश्न पर विचार-विमर्श हुआ। इस समिति के सभापति माननीय सरदार पटेल जैसे सुप्रतिष्ठित व्यक्ति थे और उसके सदस्यों में माननीय श्री खेर जैसे प्रधानमंत्री थे और माननीय डा. अम्बेडकर भी उस समिति के सदस्य थे। एक दिन प्रांतीय संविधान समिति और संघीय संविधान समिति के सदस्यों की संयुक्त बैठक हुई। इस प्रश्न पर बहुमत से यह निर्णय किया गया कि राज्यपाल पद के लिये निर्वाचन होगा। श्रीमान्, मेरे वे माननीय मित्र जो श्री कामत और श्री ब्रजेश्वर प्रसाद के संशोधन के पक्ष में बोले हैं यह कहते हैं कि अब स्थिति बदल गई हैं। इसलिये कुछ सदस्यों ने इस निर्णय में परिवर्तन करने का सुझाव किया है। स्थिति में परिवर्तन होने से आखिर इस प्रश्न पर क्या प्रभाव पड़ा है? निःसंदेह हमने इस बीच अर्थात् अगस्त 1947 को स्वतंत्रता प्राप्त की; किन्तु क्या इसका इस निर्णय में परिवर्तन करने से कोई संबंध है? क्या आप स्वतंत्र होने पर मनोनीत राज्यपालों को चाहते हैं और क्या परतंत्र रहने पर निर्वाचित राज्यपालों से संतुष्ट हो जाते? इस बीच देश का विभाजन भी हुआ है, रक्तपात भी हुआ है और देश को महान् विपत्ति का सामना करना पड़ा है। क्या यही कारण है कि हम निर्वाचित राज्यपालों के स्थान में मनोनीत राज्यपालों की व्यवस्था करें? मुझे केवल एक कारण दिखाई देता है और वह यह है कि मेरे माननीय मित्र डा. अम्बेडकर की प्रतिष्ठा में कुछ परिवर्तन हुआ है। सम्भवतः यही कारण है कि आज हम अपने निर्णय को बदल रहे हैं अन्यथा.......

***अध्यक्ष:** मैं माननीय सदस्य महोदय से यह कहता हूं कि वे व्यक्तिगत आक्षेप न करें।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी:** क्या मैं डा. अम्बेडकर की ओर संकेत भी न करूं।

***अध्यक्ष:** आप व्यक्तिगत आक्षेप न करे।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी:** श्रीमान्, मुझे इसका खेद है। मैं डा. अम्बेडकर की ओर संकेत न करूंगा। किन्तु मैं यह कहूंगा कि इस निर्णय में परिवर्तन करने का मुझे कोई कारण नहीं दिखाई देता।

मेरे माननीय मित्र श्री ब्रजेश्वर प्रसाद ने, जिन्होंने इस प्रश्न के संबंध में सरकारी संशोधन उपस्थित किया था, अपने भाषण में अधिक स्पष्टीकरण नहीं किया। उन्होंने जिस प्रकार अपना संशोधन उपस्थित किया तथा उसका समर्थन उससे यह स्पष्ट हो गया कि उन्होंने सच्चे हृदय से यह सब कुछ नहीं किया और जिस प्रकार वे भागकर अपनी जगह पर चले गये उससे भी स्पष्ट हो गया कि उन्होंने एक कड़वी घूंट पी है और उन्होंने जो कुछ कहा उससे वे स्वयं पसंद नहीं करते हैं। उपस्थित प्रस्ताव के अनुसार राष्ट्रपति नियुक्त करेगा। राष्ट्रपति कौन होगा? राष्ट्रपति विधान मंडलों के सदस्यों द्वारा निर्वाचित व्यक्ति होगा।

वह अवश्य ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा जो बहुसंख्यक दल का विश्वास पात्र होगा। भले ही कुछ माननीय सदस्यों की यह इच्छा हो कि वह राजनीति के संबंध में बिल्कुल तटस्थ रहे किन्तु वह पूरी न होगी। राष्ट्रपति राज्यपाल को किस प्रकार मनोनीत करेगा? राष्ट्रपति राज्यपाल को प्रधानमंत्री के परामर्श से नियुक्त करेगा। प्रधानमंत्री कौन होगा? प्रधानमंत्री राजनीति में डूबा हुआ एक व्यक्ति होगा वह किसी दल का सदस्य होगा और उस दल की विचारधारा से उसका पथप्रदर्शन होगा। उसके विचार एक बिल्कुल तटस्थ व्यक्ति के विचार न होंगे। यदि आप एक ऐसे व्यक्ति को जो किसी दल का सदस्य होगा और उसका नेता होगा, राज्यपाल को नियुक्त करने का अधिकार दे रहे हैं तो आप इस संबंध में लोगों को अपना मत प्रकट करने का अधिकार क्यों नहीं दे रहे हैं।? आखिर, श्रीमान्, पद स्वीकार करते समय राज्यपाल को कौन सी शपथ लेनी होगी? उसे यह शपथ लेनी होगी:

> ''मैं...अमुक, ईश्वर की शपथ लेता हूं (सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूं) कि मैं श्रद्धापूर्वक... के राज्यपाल का कार्य पालन (अथवा राज्यपाल के कृत्यों का निर्वहन) करूंगा तथा अपनी पूरी योग्यता से संविधान और विधि का परिरक्षण, संरक्षण और प्रतिरक्षण करूंगा और मैं...की जनता की सेवा और कल्याण में निरत रहूंगा।''

कोई व्यक्ति, जो किसी विशेष प्रांत के बारे में कुछ न जानता हो और उस प्रांत की भाषा न जानता हो, मनोनीत हो सकता है और उस व्यक्ति से यह आशा की जायेगी कि वह उस प्रांत की सेवा उस व्यक्ति से कहीं अच्छी तरह करेगा जो प्रांत के लोगों द्वारा निर्वाचित होगा। श्रीमान्, क्या आप इस स्थिति को स्वीकार करने के लिये तैयार हैं? वह मनोनीत व्यक्ति भारत के किसी भाग का हो सकता है—हो सकता है कि वह दक्षिण भारत का हो अथवा उत्तर भारत का हो अथवा पंजाब का हो—वह भारत के किसी कोने का हो सकता है और उससे आशा की जाती है कि वह शपथ लेगा और वह यह शपथ लेगा ही कि वह उस प्रांत के हित साधन के लिये कार्य करेगा यद्यपि उसे उनके बारे में कुछ भी जानकारी न होगी। हम इसी स्थिति को स्वीकार करने जा रहे हैं। ऐसे व्यक्ति को राज्यपाल नियुक्त करने के लिये राष्ट्रपति को प्रांत के लोगों से अथवा प्रांत के लोगों के प्रतिनिधियों से परामर्श लेने की भी आवश्यकता न होगी। वह राष्ट्रपति की स्वेच्छा से अथवा भारत के प्रधानमंत्री की स्वेच्छा से मनोनीत होगा। उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति की नियुक्ति के लिये राष्ट्रपति को सारे भारत में घूमना पड़ेगा, उसे विभिन्न उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों से भी परामर्श लेना होगा और विभिन्न प्रांतों के उच्च न्यायालयों के मुख्य न्यायाधिपतियों से भी परामर्श लेना होगा। किन्तु राज्यपाल को चुनने के लिये उस प्रांत के लोगों से भी परामर्श लेने की आवश्यकता नहीं है जिसका कि वह राज्यपाल नियुक्त होगा; उनकी सम्मति लेने की कोई आवश्यकता नहीं है। इस प्रस्ताव को स्वीकार करने में हमें कठिनाई का अनुभव होगा। यह कहा जाता है कि यदि आप निर्वाचित राज्यपाल की व्यवस्था करेंगे तो राज्यपाल और मुख्यमंत्रियों के बीच संघर्ष होगा। मेरे विचार से विभिन्न प्रांतों के वर्तमान मुख्यमंत्री इसी भय से ग्रस्त हैं और इसी कारण

[श्री रोहिणी कुमार चौधरी]

राज्यपालों के मनोनीतकरण का यह निर्णय किया गया है। किन्तु हम यह मानें (और यह बातें पहले से समझ में आ ही सकती हैं) कि ऐसा प्रधानमंत्री होगा जो किसी दल विशेष का नेता होगा और प्रांत में आप जिस राज्यपाल को रखना चाहते हैं वह किसी ऐसे दल के हाथ में होगा जो भारत के प्रधानमंत्री का दल न होगा। तो कैसी स्थिति उत्पन्न होगी? भारत का प्रधानमंत्री उस प्रांत में किसी राज्यपाल को भेजेगा। क्या उस राज्यपाल का अन्य दल द्वारा संचालित सरकार से सामंजस्यपूर्ण व्यवहार रहेगा? क्या आप यह आशा कर सकते हैं कि कांग्रेस दल द्वारा चुना हुआ राज्यपाल प्रांत के मंत्रिमंडल के साथ बिना किसी संघर्ष के सामंजस्यपूर्ण ढंग से कार्य करेगा? यह एक स्पष्ट बात है। इसके अतिरिक्त यह कैसे माना जा सकता है कि हमेशा कांग्रेस दल ही अथवा कोई अन्य दल ही पदारूढ़ रहेगा और किसी अन्य दल का प्रधानमंत्री न होगा? क्या केन्द्र में और विभिन्न प्रांतों में इस प्रकार के अवसर ही उपस्थित न होंगे? इसकी कल्पना नहीं की जा सकती है। इसलिये, श्रीमान्, मेरा निवेदन यह है कि यदि निर्वाचन की व्यवस्था को स्वीकार न करके हम वर्तमान व्यवस्था को स्वीकार करें तो संघर्ष की संभावना बढ़ जायेगी। इसके अतिरिक्त यदि आप उसे शक्ति सम्पन्न बनायेंगे और वर्तमान संविधान के अधीन वह महत्त्वपूर्ण शक्तियों का प्रयोग करेगा ही क्योंकि प्रांतों में राज्यपालों को केवल दर्शनार्थ नहीं रखा गया है, तो संघर्ष अवश्य ही होगा। किसी विशेष प्रांत में, जहां मुख्यमंत्री शक्तिशाली होगा, वह अपनी इच्छानुसार कार्य करवा सकता है किन्तु यह आवश्यक नहीं है कि सभी प्रांतों में ऐसा ही होगा। उदाहरणार्थ आसाम जैसे प्रांत में राज्यपाल को महत्त्वपूर्ण अधिकार प्राप्त होने चाहिये और कठिन परिश्रम करना चाहिये। यदि आपने वहां कोई ऐसा राज्यपाल भेज दिया जो जन जातियों के बारे में कुछ भी नहीं जानता है, जो उनके रीति-रिवाजों तथा अन्य बातों के बारे में तथा उनकी दयनीय दशा के बारे में कुछ भी नहीं जानता है और वहां जाकर उन्हें देखकर केवल चकित हो जाता है तो इसका भयंकर परिणाम होगा। हमारे जैसे प्रांत का मुख्यमंत्री जन जातियों के साथ किसी प्रकार का संबंध नहीं रख सकता है। प्रांत का मुख्यमंत्री होने के लिये उसे इसकी आवश्यकता नहीं पड़ सकती है कि वह उनके हितों की चिन्ता करे अथवा उनके बारे में पूछ-ताछ करे किन्तु यदि राज्यपाल का निर्वाचन हुआ तो कोई ऐसा व्यक्ति राज्यपाल होगा जिसके हृदय में जन जातियों के प्रति भी सहानुभूति होगी और जन जातियों, जिन्हें मुख्यमंत्री के चुनाव में मत देने का अधिकार नहीं है, कम से कम यह जान सकेंगी कि उनका राज्यपाल कौन होगा और उसके निर्वाचन में मत भी दे सकेंगी। इन लोगों को एक ऐसे व्यक्ति की नियुक्ति के संबंध में मत देने के अधिकार से क्यों वंचित किया जाये, जो उनका भाग्य विधाता होगा? इसलिये सबसे अच्छा तो यही होता कि हम निर्वाचन की व्यवस्था करते। हम इस संबंध में अंग्रेजों की प्रथा का अनुसरण क्यों करें? अंग्रेजों की प्रथा यह थी कि वे बाहर से किसी व्यक्ति को लाकर गवर्नर जनरल नियुक्त करते थे और उसे राज्यपालों को नियुक्त करने का अधिकार होता था और वह ऐसे लोगों को राज्यपाल पदों पर नियुक्त करता जिनके बारे में वह समझता था कि वे उसके हितों की रक्षा करेंगे। क्या आप राष्ट्रपति को राज्यपालों को इस प्रकार चुनने की शक्ति देने जा रहे हैं कि वह किसी प्रांत के हितों की उपेक्षा करके किसी ऐसे व्यक्ति को वहां के राज्यपाल-पद के लिये चुने जिसे केवल भारत के ही हितों का ध्यान रहे और उस प्रांत के हितों का कुछ भी ध्यान न रहे? क्या आप यह चाहते हैं

कि वहां एक ऐसा व्यक्ति पदारूढ़ रहे जो बराबर प्रांतीय मंत्रिमंडल के कार्य की देखरेख कर सके ताकि वह किसी समय भी केन्द्र के विरुद्ध कोई कार्य न करे। क्या वे लोग जो प्रांतीय राज्यपालों का मनोनीतकरण चाहते हैं इस संदेह से ग्रस्त हैं? मेरा यह निवेदन है कि उन्हें इस प्रकार का सन्देह न करना चाहिये। इसलिये मुझे यह आशा थी कि यदि आप निर्वाचन व्यवस्था को स्वीकार न भी करेंगे तो कम से कम आप नामावली से चुनने की व्यवस्था को स्वीकार कर लेंगे क्योंकि मेरी समझ में नहीं आता कि इसके विरुद्ध कौन सी तर्कपूर्ण आपत्ति की जा सकती है।

साथ ही अतिरिक्त व्यय के सम्बन्ध में भी आपत्ति की गई है। यदि सामान्य निर्वाचन के दिन ही यह निर्वाचन भी होता है तो अतिरिक्त व्यय का प्रश्न ही नहीं उठता। अधिक कार्य क्षमता का प्रश्न ही नहीं उठता। आप यह आशा नहीं कर सकते हैं कि आपके बराबर बाहर के लोगों को नियुक्त करने पर भी प्रांत के लोग संतुष्ट रहेंगे। यदि किसी कारण आप राज्यपाल के निर्वाचन को एक वृहत् कार्य भी समझते हैं तो मेरे विचार से यदि प्रांत के लोगों से किसी प्रकार परामर्श किया जायेगा तो उन्हें संतोष हो जायेगा। मसौदा समिति ने जो दूसरा विकल्प उपस्थित किया है उससे कम से कम स्थानीय विधान मंडल को राज्यपाल के संबंध में अपनी सम्मति व्यक्त करने का अवसर मिल जाता है, चाहे वह उस प्रांत का हो अथवा बाहर का, और उसे इसका भी अवसर मिलता है कि वह उस प्रांत के किसी व्यक्ति का सुझाव रखे। इससे कम से कम कुछ मात्रा में दोष का परिहार हो जायेगा।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू:** अध्यक्ष महोदय, दो वर्ष पूर्व मैंने तथा कुछ अन्य सदस्यों ने दुर्भाग्य से इस सभा को यह समझाने का निष्फल प्रयास किया था कि वह प्रौढ़ मताधिकार के आधार पर राज्यपालों को निर्वाचित करने की प्रणाली को स्वीकार न किया जाये। मुझे इसकी प्रसन्नता है कि सभा ने अब अपना विचार बदल दिया है और मेरे माननीय मित्र श्री खेर भी, जिन्होंने दो वर्ष पूर्व राज्यपालों के निर्वाचन का बड़े जोरदार शब्दों में समर्थन किया था, अब एक बिल्कुल ही भिन्न प्रणाली का समर्थन कर रहे हैं। किंतु इस मत परिवर्तन के लिये जो कारण बताये गये हैं उनमें से कुछ की हमें परीक्षा करनी चाहिये। सभा के लिये यह संभव था कि वह राज्यपालों के निर्वाचन के सिद्धांत को तो अस्वीकार करती किन्तु उनको चुनने की उस वैकल्पिक प्रणाली को स्वीकार कर लेती जिसकी सिफारिश मसौदा समिति ने की थी। किन्तु आज जिस प्रणाली का प्रस्ताव रखा गया है वह राष्ट्रपति द्वारा शुद्ध मनोनीतकरण की प्रणाली है। जहां तक मुझे स्मरण है संशोधन के प्रस्तावक महोदय ने अपने छोटे से भाषण में यह कहा था कि राज्यपाल राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत होने चाहिये ताकि केन्द्रीय कार्यपालिका की नीति के अनुसार प्रांतों का शासन हो सके। मेरे माननीय मित्र श्री खेर ने इस विषय पर बोलते हुए यह सम्मति प्रकट की है कि वह ठीक है कि प्रांतों के राज्यपालों को भारत का प्रधानमंत्री मनोनीत करे क्योंकि प्रधानमंत्री ही देश के सुशासन के लिये उत्तरदायी होगा। श्रीमान्, मैं यह देखता हूं कि यद्यपि श्री खेर ने अपने उन विचारों को बदल दिया है जो वे 1947 ई. में रखते थे किन्तु वे अब भी यह चाहते हैं कि प्रांतीय मंत्रियों पर, जो प्रांतीय विधान मंडलों में बहुसंख्यक दलों का प्रतिनिधित्व करेंगे, बाहर का कोई प्राधिकारी नियंत्रण रखे। पहले यह प्रस्ताव था कि निर्वाचित राज्यपाल उन पर नियंत्रण रखे किन्तु अब श्री खेर के मतानुसार भारत के प्रधानमंत्री की सिफरिश से मनोनीत राज्यपाल को उन पर नियंत्रण रखना चाहिये।

***माननीय श्री बी.जी. खेर:** मैंने यह नहीं कहा था।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू:** किंतु उसका निचोड़ यही है। मेरे माननीय मित्र ने यह कहा था कि चूंकि भारत का प्रधानमंत्री देश के सुशासन के लिये उत्तरदायी होगा, इसलिये सिद्धांतत: यह उचित है कि वह प्रांतीय राज्यपालों को मनोनीत करे। यदि राज्यपालों को मंत्रिमंडलों पर नियंत्रण न रखने दिया जायेगा तो प्रधानमंत्री की सिफारिश से नियुक्त ये लोग देश के सुशासन को बनाये रखने में प्रधानमंत्री की किस प्रकार सहायता करेंगे? मनोनीतकरण से उसे अपने कर्त्तव्यपालन में तभी सहायता मिल सकती है जबकि यह समझा जाये कि वह मनोनीत राज्यपालों द्वारा प्रांतीय सरकारों पर व्यवहित अथवा अव्यवहित रूप से नियंत्रण रख सकेगा।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** नियंत्रण कोई उत्तरदायित्व नहीं है।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू:** यदि मेरे माननीय मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी का यह विचार है उन्हें इस संबंध में श्री खेर के साथ विचार-विमर्श करना चाहिये और यह देखना चाहिये कि वे किसी अंश में भी सहमत हो सकते हैं। या नहीं। मैं यह अच्छी प्रकार समझता हूं कि मेरे माननीय मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी यह नहीं चाहते कि भारत का प्रधानमंत्री प्रान्तीय सरकारों पर नियंत्रण रखे। परंतु यदि श्री खेर की सम्मति को तर्क की कसौटी पर कसा जाये तो वह श्री कृष्णमाचारी की सम्मति से विपरीत प्रकट होगी। मेरे विचार से इस सभा को तथा केन्द्रीय सरकार को श्री खेर की मिथ्या धारणा के वश न होना चाहिये।

***माननीय श्री बी.जी. खेर:** मैं किसी मिथ्या धारणा के वश में नहीं हूं। माननीय सदस्य महादेय मेरे आशय को ठीक-ठीक नहीं समझ पाये हैं। मैं उन्हें यह आश्वासन देता हूं कि मैं प्रधानमंत्री को इस प्रकार की कोई शक्ति देने के पक्ष में नहीं हूं। उन्हें यह समझना चाहिये कि कार्य करने की एक प्रणाली होती है। यह आवश्यक नहीं है कि उसका संविधान में अवश्य ही सन्निवेश हो। महत्त्व व्यक्तियों का होता है न कि संविधान का।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू:** मैं यह मान लेता हूं कि अब मेरे माननीय मित्र की यह इच्छा नहीं है कि भारत का प्रधानमंत्री प्रांतीय सरकारों पर नियंत्रण रखे। किन्तु उन्हें यह बताना चाहिये था कि उनके इस कथन का क्या अर्थ है कि भारत का प्रधानमंत्री भारत के शासन के प्रति अपने कर्त्तव्यों का सुचारू रूप से तभी पालन कर सकेगा जबकि प्रांतीय राज्यपाल उसकी सिफारिश के आधार पर मनोनीत किये जाये। किन्तु यदि मेरे माननीय मित्र श्री खेर ने कुछ ही क्षणों में अपनी सम्मति बदल ली है तो अब मैं उस पर अधिक कुछ न कहूंगा। किन्तु उन्होंने जानबूझकर अथवा अनजाने जो महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठाया है उस पर सभा को विचार करना चाहिये। भारत का प्रधानमंत्री तथा उसका मंत्रिमंडल कुछ ही विषयों के संबंध में भारत के सुशासन के लिये उत्तरदायी हैं अर्थात् उन विषयों के संबंध में जो केन्द्रीय संसद के संविधान में हैं अर्थात् केन्द्रीय कार्यपालिका के क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत आते हैं। यद्यपि हमारे संविधान में केन्द्रीय विधान मंडल और कार्यपालिका को बहुत शक्ति दी गई है किन्तु वह एकात्मक संविधान नहीं है। उसमें प्रांतीय सरकारों को

नगर समितियों और जिला मंडलियों के स्तर पर नहीं लाया गया है। यद्यपि उनके प्राधिकार में कुछ कमी की गई है किन्तु उन्हें कुछ विषयों पर नियंत्रण रखने की अनन्य शक्ति दी गई है। भारत का प्रधानमंत्री उन विषयों के संबंध में सुशासन बनाये रखने के लिये उत्तरदायी न होगा जिन पर प्रांतीय विधान मंडल और कार्यपालिका अनन्य रूप से नियंत्रण रखेंगे। श्रीमान्, मेरे विचार से इसे स्पष्टतया समझ लेना चाहिये ताकि केन्द्रीय सरकार और प्रांतीय सरकारों के बीच कोई कटु संघर्ष न हो।

हमें एक अन्य महत्त्वपूर्ण बात को भी ध्यान में रखना है। हमारा संविधान ऐसा होना चाहिये जिसके द्वारा जनतंत्र स्वतंत्र तथा पूर्ण रूप से समुन्नत हो सके और देश में किसी समय भी एकसत्तात्मक शासन स्थापित न हो सकें। इस समय हम में से बहुत से लोगों की यह धारणा है कि देश के प्रांतीय कार्यपालिका की अपेक्षा केन्द्रीय कार्यपालिका का अधिक विश्वास है। किन्तु पहले तो यह कोई ऐसा कारण नहीं है जिसके आधार पर प्रांतीय सरकारों को केन्द्रीय कार्यपालिका के अधीन लाया जाये। दूसरे, हमेशा यहीं स्थित नहीं बनी रह सकती है। ऐसे समय की कल्पना की जा सकती है जबकि केन्द्रीय सरकार का उतना विश्वास न किया जायेगा जितना कि कुछ प्रांतीय सरकारों का किया जायेगा। यदि आप सभी महत्त्वपूर्ण विषयों के संबंध में केन्द्रीय कार्यपालिका को प्रांतों पर नियंत्रण रखने की शक्ति देते हैं तो यह संकटापन्न स्थिति उत्पन्न हो सकती है कि देश में एकसत्तात्मक शासन स्थापित हो जाये। ऐसे भी देश हैं जहां संधान शासन प्रणाली प्रयुक्त है और जहां समय-समय पर संधान सरकार और राज्यों की सरकारों के बीच मतभेद होता रहता है। कनाडा में तो एक प्रांतीय सरकार ने यहां तक किया कि उसने अपने यहां की मुद्रा-प्रणाली को ही बदल डाला। केन्द्र इसी कारण इस स्थिति का निराकरण कर सका क्योंकि उसने यह मत निश्चय किया कि इस विषय के संबंध में उसे ही अनन्य नियंत्रणाधिकार प्राप्त है। उसने इस संबंध में शक्ति प्रयोग के लिये राज्यपाल का अथवा अन्य किसी उपाय का उपयोग नहीं किया। इसी प्रकार यदि इस देश में भी प्रांतों और केन्द्र के बीच संघर्ष होगा तो संभावना इसी की है कि यदि संघर्ष गंभीर हुआ तो वह किसी ऐसे विषय के संबंध में होगा जो केन्द्र के अधिकार में होगा और इस दशा में केन्द्र को इस स्थिति के निराकरण के लिये पर्याप्त साधन प्राप्त होंगे। किन्तु हमें यह धारणा बिल्कुल त्याग देनी चाहिये कि केन्द्रीय कार्यपालिका की इच्छाओं को पूरा करने के लिये राज्यपाल का किसी प्रकार उपयोग किया जायेगा।

इसके अतिरिक्त, श्रीमान्, इस अवसर पर अनुच्छेद 175 और 188 का निर्देश करना अप्रासंगिक न होगा। अनुच्छेद 175 के अनुसार प्रांत के विधान मंडल द्वारा पारित किसी विधेयक के संबंध में यह आवश्यक है कि राज्यपाल अनुमति देगा अथवा उसे राष्ट्रपति के विचारार्थ रोक लेगा। मेरे माननीय मित्र, श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर, ने कनाडा का उदाहरण दिया जहां प्रांतों के लेफ्टीनेंट गवर्नरों को डोमिनियन का गवर्नर जनरल नियुक्त करता है। वहां उत्तरदायी शासन के आरम्भ-काल में लेफ्टीनेंट गवर्नर विधेयकों को गवर्नर जनरल के विचारार्थ प्रतिनिधि होने के नाते, यह अधिकार प्राप्त रोक सकता था और गवर्नर जनरल को, सम्राट का प्रतिनिधि होने के नाते, यह अधिकार प्राप्त था और अब भी है कि वह किसी प्रांतीय विधेयक के संबंध में अनुमति न दे। आगे चलकर एक ऐसी प्रणाली प्रयुक्त हुई जिसके अधीन लेफ्टीनेंट गवर्नरों के लिये यह आवश्यक नहीं है कि वे गवर्नर

जनरल के विचारार्थ विधेयकों को रोकें क्योंकि यह समझा जाने लगा कि इससे पूर्ण उत्तरदायी शासन के प्राधिकार का अल्पीकरण हो जाता है। किन्तु गवर्नर जनरल कनाडा के संविधानिक अधिनियम में निर्धारित अवधि तक किसी ऐसे विधेयक को अस्वीकार कर सकता है जिसके संबंध में गवर्नर ने अनुमति दे दी हो। श्रीमान्, इस संविधान में हमने राष्ट्रपति को इस प्रकार की कोई शक्ति प्रदान नहीं की है। राज्यपाल राष्ट्रपति के विचारार्थ किसी विधेयक को रोक सकता है किन्तु यदि राज्यपाल यह कदम न उठाये तो राष्ट्रपति की चर्चा भी न होगी। इस स्थिति में, श्रीमान्, यह स्पष्ट है कि राष्ट्रपति राज्यपालों को अनुदेश देगा कि अमुक-अमुक विधेयक उसके विचारार्थ रोके जायें क्योंकि केन्द्र उनके संबंध में सहमत नहीं है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** क्या मैं आदरपूर्वक बता सकता हूं कि हमने अभी अनुच्छेद 175 को स्वीकार नहीं किया है और अधिक संभावना इसकी है कि उसके संबंध में जो संशोधन प्रस्तावित होंगे उनसे उसका रूप ही बदल जायेगा।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू:** मुझे यह सुनकर बड़ी प्रसन्नता हुई है। यही मैं भी कहना चाहता था। अच्छा तो यह होगा कि राज्यपाल को राष्ट्रपति की हाथों की कठपुतली बनाने के स्थान पर प्रांतीय विधेयकों को किस निश्चित अवधि के अन्दर अस्वीकार करने की शक्ति राष्ट्रपति को दे दी जाये। इस दशा में सिद्धांतत: और यथार्थत: उत्तरदायित्व केन्द्रीय कार्यपालिका का हो जायेगा। अन्यथा संभावना इसकी है कि राज्यपाल और उसके मंत्रिमंडल के बीच संघर्ष होगा। कनाडा के प्रांतों के उदाहरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह भय केवल काल्पनिक ही नहीं है।

श्रीमान्, अब मैं अनुच्छेद 188 को उठाता हूं। मैं कह नहीं सकता कि मेरे माननीय मित्र श्री कृष्णमाचारी मुझसे इस अनुच्छेद के संबंध में भी यह कहेंगे कि राज्यपाल को चुनने की प्रणाली में जो परिवर्तन किया गया है उसे दृष्टि में रखते हुए उसे निकाल देने का अथवा उसमें परिवर्तन करने का प्रस्ताव है। जब दो वर्ष पूर्व सभा ने राज्यपालों को निर्वाचन के संबंध में निर्णय किया था तो उस समय यही मुख्य तर्क उपस्थित किया गया था कि आपात की गम्भीर स्थिति उत्पन्न होने पर राज्यपाल को निर्णयात्मक रुप से कार्य करने की शक्ति प्राप्त होनी चाहिये। उस समय यह अनुभव किया गया था कि लोक समर्थन पर आश्रित उत्तरदायी मंत्रिमंडल संकट के समय उतनी शक्ति से कार्य न कर सकेंगे जितनी स्थिति के निराकरण के लिये आवश्यक होगी और यह भी अनुभव किया गया कि बुद्धिमत्ता इसी में है कि प्रांत की निर्वाचित प्रभुत्वसंपन्न कार्यपालिका को गंभीर आपात के उपस्थित होने पर प्रांत में शांति बनाये रखने के लिये पर्याप्त शक्तियां प्रदान की जानी चाहियें। 1947 ई. के पश्चात् इस संबंध में मत परिवर्तन हुआ है जो कि इससे स्पष्ट हो जाता है कि मेरे माननीय मित्र श्री ब्रजेश्वर प्रसाद के संशोधन का अभी तक समर्थन ही हुआ है। इसलिये, श्रीमान्, मुझे आशा है कि अनुच्छेद 188 निकाल दिया जायेगा। किसी प्रांत में कोई ऐसी घटना घटित होने पर जिससे देश की शांति संकट में पड़ जाये अथवा ऐसी स्थिति उत्पन्न होने पर, जो दृढ़ता से कार्य न करने के कारण आगे चलकर विकट रूप धारण कर सकती है, यथोचित कार्य करने के लिये गणराज्य के राष्ट्रपति को

किसी अन्य अनुच्छेद के अधीन शक्ति प्रदान की जा सकती है; श्रीमान्, मेरे विचार से प्रांतीय राज्यपालों को प्रशासन को अपने हाथ में लेने की शक्ति देने की अपेक्षा इस ढंग से प्रांतों की आपात की स्थिति का अधिक अच्छी प्रकार निराकरण किया जा सकता है। यद्यपि अंतिम शक्ति गणराज्य के राष्ट्रपति को ही प्राप्त है किन्तु संभवत: बिना राज्यपाल से परामर्श किये वह कोई कार्य न करेगा। राज्यपाल अपने प्रांत की स्थिति की सूचना राष्ट्रपति को दे सकता है और यह उस पर छोड़ सकता है कि वह जिस किसी कार्य को करने का निर्णय करना चाहे, करे।

श्रीमान्, इस दृष्टि से मुझे आशा है कि अनुच्छेद 188 या तो निकाल दिया जायेगा या इस प्रकार संशोधित किया जायेगा कि वह प्रांतों में उत्तरदायी शासन की स्थापना से असंगत न होगा और उसके कारण राज्यपाल और मंत्रिमंडल के बीच कटु संघर्ष न होगा। संविधान के अधीन आपात के समय जिस किसी नियंत्रण की आवश्यकता हो उसे गणराज्य का राष्ट्रपति स्वयं प्रयोग में लाये और राज्यपाल द्वारा प्रयोग में न लाये ताकि राज्यपाल और मंत्रिमंडल के बीच संघर्ष न हो।

***माननीय श्री बी.जी. खेर:** क्या माननीय सदस्य महोदय संशोधन का समर्थन कर रहे हैं अथवा विरोध?

इसके पश्चात् सभा मंगलवार, 31 मई, 1949 के आठ बजे तक के लिये स्थगित हो गई।